गांधी कथा

उमाशंकर जोशी

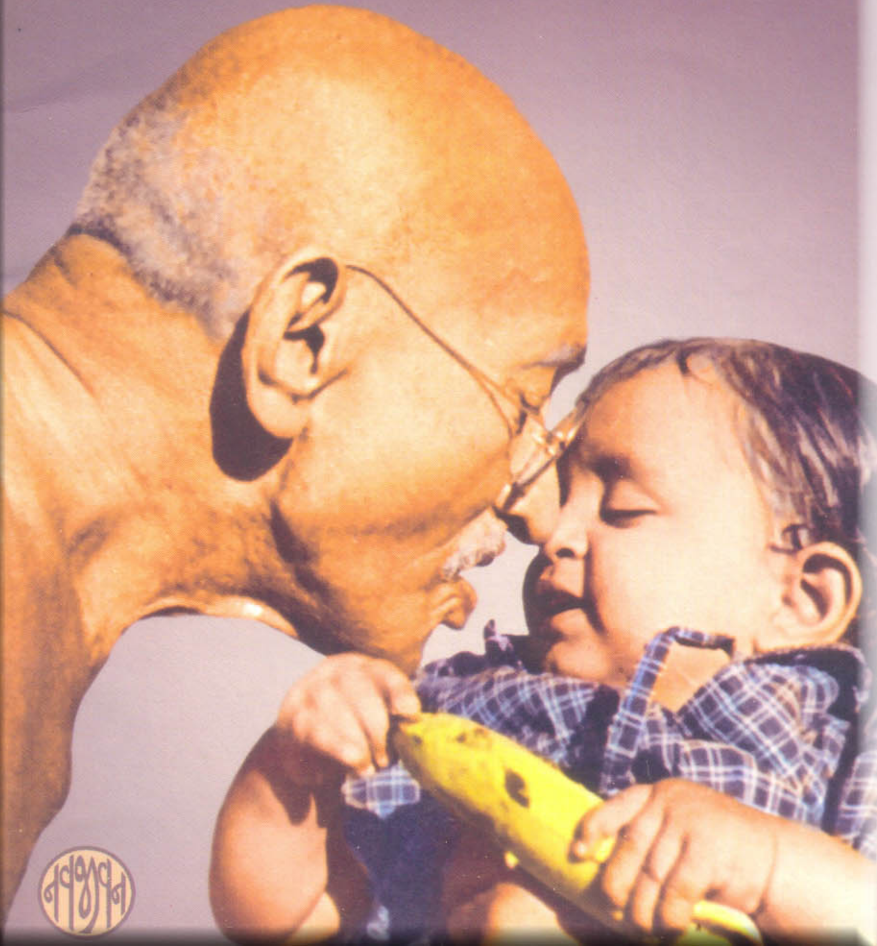

गांधी कथा

(गांधीदर्शन परीक्षा के लिए खास संक्षिप्त आवृत्ति)

उमाशंकर जोशी

नवजीवन प्रकाशन मंदिर
अहमदाबाद - ३८० ०१४

कपूर के दीये

महात्मा गांधी से बंगाल में किसी भाई ने कोई संदेश माँगा तब बापू ने बांग्ला में चार शब्द कहे, "आमार जीबोन आमार बानी"- मेरा जीवन ही मेरा संदेश है। इस तरह वे चाहते थे कि उनके शब्दों के बजाय उनके कार्यों में, उनके आचरण में उनके जीवन के संदेश ढूँढे जाएँ। उनके जीवन की छोटी-छोटी घटनाओं में प्रकट होनेवाली जीवन की किसी न किसी विलक्षणता का परिचय कराने के लिए 'गांधी कथा' की १२५ घटनाएँ प्रस्तुत की जा रही हैं। हर घटना कपूर का एक दीया है, जो जल जाने के बाद भी गांधीजी द्वारा जीवन भर पल-पल तराशी हुई अपनी भव्य सुंदर जीवनाकृति का विशिष्ट दर्शन कराए तो बहुत है।

अभय, सत्यप्रियता, अहिंसा हर एक से संबंधित घटनाएँ अलग-अलग गुच्छों में एक साथ भी दी जा सकती हैं, किंतु एक ही घटना अभय और अहिंसा दोनों की हो सके, इसलिए उन्हें विषयों में विभाजित नहीं किया गया। घटनाएँ काल-क्रमानुसार भी दी जा सकती थीं, पर सवाल यह उठता कि बीच के कुछ बरसों की घटनाएँ क्यों नहीं हैं? जो ज़रूरी नहीं है उसे यहाँ नहीं दिया गया, क्योंकि पूरे जीवन को काल-क्रमानुसार देने का विचार नहीं था। घटनाएँ जैसे लिखी जाती गईं और 'संस्कृति' में १९६९ के शताब्दी वर्ष में जैसे-जैसे छपती गईं वैसे ही यहाँ प्रस्तुत की जा रही हैं।

गांधीजी किसी भी घटना की प्रामाणिकता के आग्रही थे, अतः मैंने भी प्रामाणिकता की ओर विशेष ध्यान दिया है। घटनाओं के लिए मैंने बापू के लेखों का उपयोग किया है। इसके अलावा महादेव भाई की डायरी के १ से ९ खंड, स्वर्गीय रावजी भाई पटेल की किताबें, काका कालेलकर और मनु बहन की किताबें, प्रभुदास गांधी की 'जीवन की भोर', स्व. रामदास गांधी के संस्मरण और शंकरलाल बैंकर के 'गांधीजी और राष्ट्रीय प्रवृत्ति', इत्यादि ग्रंथों का उपयोग मैंने किया है। मैं इन सभी लेखकों का ऋणी हूँ।

इन सब पुस्तकों के प्रकाशकों तथा नवजीवन प्रकाशन के प्रति भी मैं आभार प्रकट करता हूँ। कुछ घटनाएँ मुझे कुछ व्यक्तियों से मिली हैं, जिनमें से श्रीमती विजया बहन पांचोली, श्रीमती प्रभावती बहन नारायण और मदालशा बहन नारायण का में विशेष कृतज्ञ हूँ।

कुलपति निवास - उमाशंकर जोशी
गुजरात विद्यापीठ
अहमदाबाद - ३८० ००९
गांधी जन्मशताब्दी दिवस - २ अक्टूबर १९६९

प्रकाशक का निवेदन

गांधी जन्मशताब्दी वर्ष में स्वर्गीय श्री उमाशंकर जोशी ने अपनी पत्रिका 'संस्कृति' में जनवरी से अक्टूबर तक गांधीजी के जीवन के १२५ प्रसंग प्रकाशित किए। इन प्रसंगों को जब 'गांधी कथा' नाम से पुस्तक रूप में प्रकाशित किया गया तब जोशी जी ने 'कपूर के दीये' के रूप में इनकी पहचान कराई।

यह पुस्तक फ़िलहाल अप्राप्य थी। 'गांधी जीवन परिचय परीक्षा' के लिए यह किताब उपलब्ध हो यह इच्छा गांधी-स्मृति के परीक्षा संयोजक श्री अंधारिया ने व्यक्त की। नवजीवन ने उन्हें सूचित किया, यदि लेखक की अनुमति मिले तो हम उसे अवश्य प्रकाशित करेंगे। श्रीमती स्वाति बहन उमाशंकर जोशी ने अनुमति प्रदान कर प्रकाशन को आसान बना दिया।

यह आवृत्ति उन १२५ कपूर के दीये वाली 'गांधी कथा' नहीं है। श्री अंधारिया जी ने परीक्षा की दृष्टि से सिर्फ ६० प्रसंग चुन लिये हैं। इस तरह यह पुस्तक परीक्षार्थियों के लिए तैयार की गई 'गांधी कथा' की विशिष्ट आवृत्ति है। श्रीमती स्वाति बहन ने इन प्रसंगों को इस रूप में प्रकाशित करने की अनुमति प्रदान कर हम पर अहसान किया है। हम आशा करते हैं कि यह 'गांधी कथा' साधारण पाठकों को भी आनंद प्रदान करेगी।

(१)

नन्हा मोहन अकेले अंधेरे में जाने से डरता था। उसका दिल धड़कने लगता था। उसे लगता कि दाईं ओर से भूत आएगा और बाईं ओर से प्रेत।

पर एक बार अंधेरे में अकेले जाना ही पड़ गया, पर मोहन जाए तब तो! डरपोकों का बादशाह था नन्हा मोहन। पास में ही खड़ी थी घर की दाई रम्भा। उसने धीरे-से कहा,"डरता क्यों है? अंधेरा हो या कुछ भी हो अगर हम राम का नाम लेकर चलेंगे तो हमारा बाल भी बांका नहीं होगा।" मोहन आगे बढ़ा, उसकी ज़बान पर और उसके दिल में राम का नाम था। उसी दिन से मोहन का डर जाता रहा। राम नाम ने मोहन को इतना निर्भय बना दिया कि उसने चालीस करोड़ भारतीयों को ही नहीं, दुनिया के हर इंसान को निर्भयता से जीने की राह दिखाई। जीवन के आखिरी पल में भी उसकी ज़बान पर वही एक शब्द था - राम!

(२)

अभी नया-नया ही सेवाग्राम आश्रम शुरू हुआ था। रूई धुनना और सूत कातना सीखने के लिए आस-पास के गांवों से छोटे-छोटे बच्चे आते और शाम तक दो पैसे कमा लेते।

वे सुबह आते तो शाम को जाते। एक बार बापू ने विजया से

पूछा कि बच्चे दोपहर को क्या खाते हैं?

विजया को पता रहता कि बच्चे क्या खाते हैं। दोपहर को जब वह बा-बापू और अपने कपड़े बाल्टी में भरकर उन्हें धोने के लिए कुएँ पर जाती थी तब वहीं बच्चे खाना खाते थे। कई बार वह बच्चों से पूछती कि आज क्या खा रहे हो तो जवाब मिलता, “रोटी-सब्जी”। विजया ने बापू को यह सब बताया।

बापू ने पूछा - “हमारे यहाँ छाँछ बची रहती है?”

विजया ने कहा - “हाँ!”

बापू - “तो कल से बच्चों को छाँछ भी देना।”

और छाँछ देने की ज़िम्मेदारी विजया ने संभाल ली।

तीन दिन बाद बापू ने फिर पूछा -“बच्चों को छाँछ देती हो न?”

विजया - “मैं तो भूल गई, बापू। मुझसे गलती हो गई।”

बापू कुछ पल चुप रहे, फिर बड़े प्यार से विजया को समझाया - “नहीं, तू भूली नहीं, क्योंकि भूलना तेरा स्वभाव नहीं है।

मेरे जितने भी काम तेरे ज़िम्मे हैं उन्हें तू बड़ी सावधानी से करती है। टहलने निकलूँ, ठीक से साफ किए हुए चप्पल करीने से रखे रहते हैं। उसी के पास मेरी लाठी भी रखी रहती है। तू भूलक्कड़ नहीं है। मेरे सारे छोटे-बड़े काम तू बिना भूले करती है, क्योंकि मैं महात्मा हूँ न! महात्मा के काम तो हम नहीं भूलते हैं, पर मासूम बच्चों के काम हम भूल जाते हैं। पर मेरा ऐसा मानना है कि तू मेरे काम भूल जाय तो कोई बात नहीं, पर इन बच्चों के काम पूरी सावधानी और प्यार से करोगी तो मुझे बहुत खुशी होगी।”

(३)

सेवाग्राम आश्रम में एक लड़का इधर-उधर भटकता था। विजया ने उसे देखा और उसके बारे में पूछा। उसने बताया -“मेरा नाम सोमा है, पहले साबरमती आश्रम में रहता था अब यहाँ रहना चाहता हूँ।”

विजया उसे बापू के पास ले गई, बापू ने पहचान लिया। विजया को कुछ हिदायतें देते हुए कहा कि यह हरिजन बालक है, उसे यहाँ रहने दिया जाय। उसे कुछ काम बता देना और उसका ख़याल रखना। साबरमती आश्रम में सोमा कभी कुछ चीज़ें चुरा लेता था।

सोमा फ़ैज़पुर अधिवेशन में गया था और वहाँ से खाली हाथ यहाँ आया है। सिर्फ़ नेकर और बनियान पहन रखी थी। विजया ने उसे खाना दिया और सोने के लिए अपने पास की दरी दी। कस्तूरबा ने ओढ़ना दिया।

उस दिन रविवार था। रविवार रात से सोमवार शाम तक बापू का मौन रहता था। रात सोने जाने से पहले बापू ने इशारे से पूछा ‘उस बच्चे का क्या हुआ?’ विजया ने बताया कि सारी व्यवस्था कर दी गई है। बापू ने वह व्यवस्था देखनी चाही। विजया ने काफ़ी समझाया कि उसे खाना खिलाकर ठीक से सुलाया गया है, पर बापू कहाँ मानने वाले थे। वे आए और देखा कि सोमा बरामदे में ठीक से ओढ़कर सोया है। बापू विजया को अपने कमरे में ले गए। वहाँ खूँटी पर एक पोटली लटक रही थी। इशारे से उसे उतारने के लिए कहा। फिर नीचे बैठकर उसमें से कुछ ढूँढ़ने लगे। पोटली में बापू की पुरानी धोतियाँ आदि तह करके रखी गई थीं। उन्हीं में से कुछ कपड़े लेकर बापू उठे, बरामदे में आकर सोमा के चेहरे से ओढ़ना

हटाया, तह किए हुए कपड़े तकिए की तरह उसके सिर के नीचे रख दिए और उसे ओढ़ाकर सोने चले गए। सोमा गहरी नींद में था और एक महात्मा का वात्सल्य भरा स्नेह उसके सिरहाने धरा था।

(४)

सन् १९२२ में अंग्रेज़ सरकार ने गांधीजी को छह साल की सज़ा सुनाई। अपने बयान में गांधीजी ने कहा था - सरकार की निगाह में जो अपराध है, मानवता की नज़र में वह धर्म है। और मैंने उसका पालन किया है। यदि यह गलत है तो मुझे उसकी सज़ा ज़रूर दी जाय।

यह ख़बर देश के कोने-कोने में फैल गई। बंगाल के एक गाँव में यह ख़बर सुनकर एक मुसलमान रो पड़ा। उसके मकान में श्री दत्त रहते थे, जो हिंसक क्रांति का समर्थन करते थे। उन्होंने पूछा, "क्यों रोते हो, भाई?"

उस मुस्लिम चौकीदार के हाथ में बांग्ला अख़बार था, जिसमें गांधीजी के मुकदमे की ख़बर छपी थी। वह बोला, "मेरी जाति के एक आदमी को सज़ा हुई है। छह साल की सज़ा। बूढ़ा है। ५३ साल का। देखो यह अख़बार।"

अख़बार में लिखा था कि गांधीजी ने अपना व्यवसाय खेती और बुनकरी बताया था।

मुसलमान चौकीदार जाति का बुनकर था। अत: उसे लगा कि उसकी जाति का आदमी जेल चला गया। श्री दत्त अपने संस्मरणों में लिखते हैं, "हम कहाँ के क्रांतिकारी? क्रांतिकारी तो गांधीजी हैं जो पूरे देश के साथ एकाकार हो गए हैं। मैं किसान हूँ, बुनकर हूँ - उनकी यह आवाज़ देश भर में पहुँच गई होगी। करोड़ों को लगा होगा कि हममें से ही कोई जेल गया, जो जनता से एकाकार हुआ जो जनता से जुड़ा वही देश को मुक्त कर सकता है। उस सच्चे क्रांतिकारी को प्रणाम।"

(५)

बापू के शरीर पर कुर्ता भी नहीं था। यह देखकर एक छोटे विद्यार्थी ने बापू से पूछा, "बापू, आप कुर्ता क्यों नहीं पहनते?"

बापू ने जवाब दिया, "मेरे पास पैसे कहाँ है?"

विद्यार्थी बोला, "मैं अपनी माँ से कहूँगा, वे आपके लिए कुर्ता सिलवा देंगी। तब तो पहनेंगे ना?"

बापू - "कितने कुर्ते सिलवा देगी?"

विद्यार्थी - "आपको कितना चाहिए? एक...दो....तीन..."

बापू -"मैं अकेला थोड़े ही हूँ? अकेले मैं कैसे पहन सकता हूँ?"

विद्यार्थी - "तो कितने लोगों के लिए चाहिए?"

बापू - "मेरे चालीस करोड़ भाई-बहन हैं, क्या तुम्हारी माँ उन सबके लिए सिलवा देगी? मेरी बारी तो उन सबके बाद आएगी।"

विद्यार्थी दुविधा में पड़ गया। मासूम बच्चा बापू को प्यार से कुर्ता देने गया और बापू ने उसके कोमल मन को, पूरे विश्व को अपना परिवार समझने की शिक्षा दे दी।

(६)

ढेर सारे कामों के बीच भी बापू हर सवेरे एक घंटा अवश्य घूमने जाते थे, जबकि उनके राजनीतिक गुरु गोखले इस तरह घूमने नहीं जाते थे। शायद यही कारण था कि उनकी सेहत भी कुछ ठीक नहीं रहती थी और बापू इस बारे में अपनी प्यार भरी नाराज़गी व्यक्त किया करते थे। घूमने के लिए आश्रम से निकलते वक़्त बापू के साथ कई लोग होते। किसी को कोई ख़ास बात करनी होती तो बापू उसे मिलने के लिए, सुबह घूमने जाते वक़्त बुला लेते। वे चलते-चलते ही बातें करते जाते।

लेकिन बापू पर सबसे पहला हक़ था बच्चों का। बापू उनके साथ ख़ूब मस्ती करते। एक बार एक शरारती बच्चे ने पूछा, "बापू, एक बात पूछूँ?" बापू ने कहा, "पूछो"। थोड़ा आगे बढ़कर बापू के सामने जाकर वह बोला, "अहिंसा का यही अर्थ है ना कि दूसरों को दुख न दिया जाय?"

बापू ने कहा, "हाँ"।

बच्चे ने तुरंत पकड़ लिया, "तो फिर हँसते-हँसते, आप हमारे गालों पर जो चिकोटी काटते हो वह हिंसा कहलाएगी या अहिंसा?"

बापू बोले, "खड़ा रह शैतान कहीं का।" और उसे पकड़कर ज़ोर-से चिकोटी काटी। सारे बच्चे हँस-हँसकर ताली बजाने लगे- "बापू को चिढ़ाया, बापू को चिढ़ाया।" इस सारे हँसी-मज़ाक में सबसे बड़ा ठहाका ख़ुद बापू का ही सुनाई पड़ रहा था।

(७)

गांधीजी एक बड़े आदमी के यहाँ ठहरे थे। शाम की प्रार्थना का वक़्त था और काफ़ी लोग प्रार्थना में जमा हुए थे। प्रार्थना शुरू करने का वक़्त हुआ। गांधीजी ने कहा - "बिजली का स्विच बंद कर दो। जहाँ बिजली का स्वीच था, वहीं घर के मालिक बैठे थे, पर अपनी आदत के अनुसार उन्होंने नौकर को आवाज़ लगाई। इतने में जल्दी-से गांधीजी ख़ुद ही खड़े हुए और स्विच बंद कर दिया। प्रार्थना के बाद रोज़ की तरह सवाल-जवाब हुए। किसी ने कताई के बारे में सवाल किया, तब जवाब में 'गीता' का ज़िक्र करते हुए गांधीजी

बोले - "जो यथार्थ कर्म नहीं करते वे चोर हैं।"

प्रार्थना के बाद लोग जाने लगे। कोने में रखी मेज़ को किसी का धक्का लगा और उस पर रखा शो-पीस गिरकर टूट गया। इतने में घर के मालिक ख़ुद दौड़कर वहाँ पहुँचे और टुकड़ों को चुनने लगे। नौकर को पुकारने की आदत कहाँ गई! पलभर में यह कैसा परिवर्तन!

यह उस महान अतिथि के आचरण का जादू था।

(८)

नन्हा मोहन स्कूल से छूटते ही घर भागता। आस-पास देखता भी नहीं। मन में रहता की कहीं कोई मेरा मज़ाक उड़ा दे तो! स्कूल खुलते पहुँच जाना और छूटते ही घर। यही उसका रोज़ का क्रम था। शर्मीला स्वभाव। अपने काम से काम। न किसी से दोस्ती न

किसी से बातचीत। शिक्षकों के प्रति मन में आदरभाव रखता था। इसलिए उन्हें ठगने के बारे में सोच भी नहीं सकता था।

हाइस्कूल में परीक्षा थी। शिक्षा विभाग के इन्स्पेक्टर जाइल्स मुआयने के लिए आए थे। उन्होंने पहले दर्जे के लड़कों को अंग्रेज़ी के पाँच शब्द लिखवाए। मोहन ने 'केटल' शब्द की स्पेलिंग गलत लिखी। शिक्षक ने जूते की नोक से इशारा किया, पर मोहन समझे तब न। वह तो यह सोच भी नहीं सकता था कि शिक्षक उसे सामने के लड़के की स्लेट देखकर गलती सुधारने को कह रह थे। वह तो यह मान बैठा था कि शिक्षक वहाँ इसलिए हैं कि विद्यार्थी एक-दूसरे की नकल न कर सकें। सारे लड़कों के पाँचों शब्द सही निकले सिर्फ़ मोहन बेवकूफ़ साबित हुआ। बाद में शिक्षक ने मोहन को उसकी मूर्खता समझाई पर बापू तो कहते हैं -"मेरे मन पर उनके समझाने का कोई प्रभाव नहीं हुआ। मुझे दूसरे बच्चों से चोरी करना कभी नहीं आया।"

(९)

अपने सफ़र के दौरान गांधीजी एक आश्रम पाठशाला में गए। बरसात हो रही थी। बच्चों को सुबह आने में देर हो गई। गांधीजी को दूसरी जगह जाना था, अत: बच्चों के साथ कुछ पल ही बिता पाए। गांधीजी ने बात शुरू की-"तुम सब सूत कातते हो और खादी पहनते हो, पर मुझे यह बताओ कि तुममें से कितने हमेशा सच बोलते हैं यानी झूठ कभी नहीं बोलते।"

थोड़े-से बच्चों ने हाथ ऊपर उठाए।

तब गांधीजी ने दूसरा सवाल किया - "अच्छा तो अब कभी-कभी जो झूठ बोलते हैं ऐसे कितने हैं?"

दो बच्चों ने हाथ उठाया।

फिर तीन....

फिर चार....

फिर तो हाथ ही हाथ दिखाई दे रहे थे। लगभग सभी बच्चों ने हाथ उठा रखे थे।

गांधीजी ने उनसे कहा- "जो बच्चे जानते हैं और मानते हैं कि वे कभी-कभार झूठ बोल लेते हैं, उनके लिए तो हमेशा उम्मीद है। पर जिन्हें ऐसा लगता है कि वे कभी झूठ नहीं बोलते, उनकी राह मुश्किल है, जबकि मैं दोनों की कामयाबी चाहता हूँ। और उन्होंने बच्चों से इजाज़त ली।

(१०)

गांधीजी का हस्ताक्षर लेने के लिए किसी ने उन्हें ऑटोग्राफ़ बुक दी। उन्होंने उसके पन्ने पलटे। एक पन्ने पर दुनिया के महान क्रिकेट खिलाड़ियों के एम.सी.सी. दल के सदस्यों की कतार में करीब सोलह हस्ताक्षर थे। इसी के आख़िर में गांधीजी ने अपने हस्ताक्षर किए। गांधीजी भी तो एक खिलाड़ी थे।

हिंद के महान क्रिकेट खिलाड़ी नवाब पटौदी एक बार उनसे मिलने गए।

गांधीजी ने कहा, मैंने निर्णय किया है कि क्रिकेट में हम दोनों लोग अकेले-अकेले आमने-सामने खेलें।

पटौदी ने कहा - एक शर्त पर, मैच पूरा होते ही राजनीति में मैं आपको चुनौती दूँ इसकी इजाज़त दीजिए। गांधीजी ने स्वीकार कर

लिया। तब नवाब पटौदी गंभीरता से बोले - "देखिए, मुझे पूरा यकीन है कि क्रिकेट में आप मुझे बुरी तरह हरा दें पर साथ ही मुझे भरोसा है कि राजनीति में मैं आपको पराजित कर दूँगा। गांधीजी बच्चों की तरह खिल-खिलाकर हँस पड़े और नवाब की पीठ थपथपाकर बोले -"नवाब साहब, आपने तो अभी से मुझे बोल्ड करके मेरी विकेट गिरा दी।

(११)

राजकोट के अल्फ्रेड हाइस्कूल के हेडमास्टर दोरबजी एडलजी गिमी ने ऊँची कक्षाओं के विद्यार्थियों के लिए खेल अनिवार्य कर दिया। नन्हा मोहन, जो पहले खेल-कूद में भाग नहीं लेता था, अब खेलने जाने लगा। एक दिन हेडमास्टर ने बुलाया-"तुम शनिवार शाम खेल में क्यों नहीं आए?"

मोहन बोला कि वह आया तो था पर खेल के मैदान में कोई नहीं था।

"देर से क्यों आए?" हेडमास्टर गुस्साए।

मोहन ने सफाई दी कि उसके पास घड़ी नहीं थी और बादल छाए रहने के कारण समय का पता न चला। हेडमास्टर को यह बहानेबाज़ी लगी। उन्होंने मोहन को दो आने जुर्माने का दंड दिया। मोहन को बहुत बुरा लगा-"मैं गलत कहलाया। कैसे साबित करूँ कि मैं गलत नहीं हूँ।" पर कोई उपाय न था। मन-ही-मन में दुखी हुआ और ख़ूब रोया। उसी दिन नन्हे मोहन ने तय कर लिया कि हमारा सही होना ही काफ़ी नहीं है, सत्य का आचरण करनेवालों को हमेशा सावधान भी रहना चाहिए। खेल के मैदान से जीवन के महान खेल

के लिए नन्हे बालक ने एक नियम बनाया, जो उसे जीवन भर काम देता रहा।

(१२)

गांधीजी सवेरे जल्दी उठ जाते। उठकर तुरंत मुँह धोते और दातून करते, इसके लिए पानी का छोटा लोटा और पीकदानी बिस्तर के पास ही रखते, जिससे दोनों काम वहीं निपटा सकें। मोहनलाल पंड्या ने कहा- "बापू, पानी की क्या कमी है। साबरमती तो सामने बह रही है। पानी की कंजूसी क्यों करते हो?" जवाब में गांधीजी ने उनसे पूछा-"पहले यह बताओ, मेरा मुँह साफ हुआ है या नहीं?"

पंड्याजी ने कहा - "साफ तो है ही।"

गांधीजी - "तो परेशानी किस बात की। तुम लोटे भर-भरकर पानी का उपयोग करते हो, लेकिन भीगे हाथ, मुँह पर घुमाते रहते हो। मैं इतने ही पानी से मुँह ठीक से साफ कर लेता हूँ, तो मेरे लिए इतना ही पानी पर्याप्त है।"

पंड्या - "पर नदी में इतना सारा पानी है और...।"

गांधीजी - "नदी का पानी किसके लिए है? मेरे अकेले के लिए?"

पंड्याजी - "सबके लिए है। हमारे लिए भी है..."

गांधीजी - "ठीक! नदी का पानी सारे पशु, पक्षी, मानव, जीव-जंतु सभी के लिए है, मेरे अकेले के लिए नहीं। मैं अपनी जरूरत भर लूँ तो ठीक है, पर अधिक लेने का मुझे हक नहीं है। सांझी संपत्ति में से ज़रूरत से ज़्यादा हम नहीं ले सकते।"

(१३)

एक बार अपने एक साथी को मिट्टी का बड़ा ढेला ले आते देखगांधीजी ने पूछा-"ढेला क्यों लाए?"

उन्होंने जवाब दिया -"लोटा धोने के लिए!""इतना बड़ा?"

"बड़ा मिला तो बड़ा लाया।"

"पूरे ढेले से धोओगे? बचेगा तो क्या करोगे?"

"जैसे वहाँ पड़ा था, वैसे यहाँ पड़ा रहेगा।"

"वहाँ तो अपनी जगह पर था, यहाँ तो गंदगी करेगा। एक तो तुम यहाँ कचरा करोगे और दूसरे यह कि तुम जीवन के बारे में सोचने की आदत नहीं डालते।"

साथी सोच में पड़ गया। छोटी-छोटी बातों से जीवन महान बनता है। गांधीजी के साथी को कूड़े-कचरे की अपनी व्याख्या समझाई। यदि सोने की जंज़ीर तिजोरी के बजाय घर में यूँ ही पड़ी रहे तो वह भी कूड़ा-कचरा समझी जाती है। कूड़े-कचरे का अर्थ है कि किसी भी चीज़ का सही जगह पर न होना।

(१४)

बालक मोहन माँ की सेवा के लिए हमेशा तैयार रहता। माँ पुतलीबाई एक साध्वी थीं। पूजा-पाठ करने के बाद ही वे कुछ खाती-पीती थीं। चौमासे में एक ही बार भोजन करती थीं। कठिन से कठिन व्रत रखना और उसे पूर्ण करना उनके लिए अत्यंत सहज था। बीमार पड़ने पर भी व्रत नहीं छोड़तीं। एक साथ दो-तीन दिन का उपवास भी उनके लिए मामूली-सी बात थी। एक बार बरसात के

दिनों में उन्होंने ऐसा व्रत लिया कि सूर्य दर्शन के बाद ही खाना खाएँगी। छोटे बच्चे घर के बाहर खड़े होकर आसमान देखते रहते कि सूरज कब दिखे और माँ खाना खाएँ। लेकिन बरसात के दिनों में सूर्य का दर्शन बहुत मुश्किल हो जाता है। बादलों में ज़रा-सा सूरज दिखा कि नन्हा मोहन माँ को बताने के लिए दौड़ता - "माँ-माँ सूर्य निकला!" माँ जल्दी-जल्दी घर से निकलकर बाहर आतीं, तब तक सूर्य छिप जाता। और वे यह कहते हुए लौट जातीं -"कोई बात नहीं आज खाना नहीं है।" और जाकर अपने काम में लग जातीं। इस साध्वी माता के सहज तपस्वी जीवन की छाप बालक मोहन के हृदय पर हमेशा के लिए अंकित हो गई।

गांधीजी को धार्मिक जीवन का प्रथम पाठ माँ से मिला। आचार, निष्ठा और तपस्वी जीवन के बारे में माँ ही उनकी गुरु बनीं।

(१५)

बापू ने दक्षिण अफ़्रीका में फ़ीनिक्स आश्रम की स्थापना की। वहाँ उन्होंने बच्चों के लिए पाठशाला भी शुरू की। बच्चों को सही शिक्षा मिले इसके लिए वे हमेशा प्रयत्न करते रहे।

परीक्षा के अंक देने में बापूजी का तरीका अलग ही था। एक ही सवाल सभी से पूछे जाते थे। एक ही कक्षा के विद्यार्थियों, जिसने ज़्यादा अच्छे उत्तर लिखें हो, उन्हें कम अंक और जिसने कम अच्छे उत्तर लिखें हो, उन्हें वे ज़्यादा अंक देते थे।

इस वजह से कुछ बच्चे नाराज़ हो जाते थे। बापूजी उन्हें अच्छी तरह से समझाते - "एक विद्यार्थी से दूसरा विद्यार्थी तेज़ है ऐसा अनुमान मुझे नहीं लगाना है। मुझे तो यह देखना है कि प्रत्येक

विद्यार्थी जो है उससे वह कितना बेहतर हुआ है। बुद्धिमान बच्चा कम बुद्धिमान बच्चे के साथ अगर अपनी तुलना करके गर्व करता फिरे तो उसकी बुद्धि तेज़ नहीं रहेगी। वह पढ़ने में कम मेहनत करेगा और अंत में पीछे ही रहेगा। मैं तो उसे ही अंक दूँगा जो ज़्यादा मेहनत से और लगन से काम करेगा।"

ज़्यादा अंक प्राप्त करनेवाले विद्यार्थी का भी विकास हो रहा है या नहीं इस पर बापू की हमेशा नज़र बनी रहती। दूसरे कम तेज़ विद्यार्थियों से ज़्यादा अंक मिलने के कारण वह फूला न समाए तो उसमें उसका क्या भला होगा? यह बात उसके मन में बिठा देना चाहते थे। कम तेज़ विद्यार्थी एक बार कम अंक पाए किंतु बाद में मेहनत करके यदि वह ज़्यादा अंक लाता है तो उसकी इस प्रगति के लिए उसकी पीठ थपथपाने को बापू हमेशा तैयार रहते थे।

दूसरे से स्पर्धा में ख़ुद को ऊँचा या नीचा दिखाने में नहीं, बल्कि हम ख़ुद जहाँ हैं वहाँ से सही मायने में कितना आगे बढ़े हैं उसे देखना ही सही शिक्षा है। यह बात बापूजी ने परीक्षा के तरीके में एक छोटा-सा, किंतु महत्त्वपूर्ण बदलाव लाकर सबको समझाई।

(१६)

एक बार फ़ीनिक्स की पाठशाला में बच्चों को 'पहला सत्याग्रही कौन?' विषय पर निबंध लिखने को कहा गया।

किसी बच्चे को लगा कि थंबी नायडु पहला सत्याग्रही था, क्योंकि उसने दक्षिण अफ़्रीका की प्रारंभिक लड़ाई में भाग लिया था।

दूसरे को लगा कि पहला सत्याग्रही तो स्वयं बापूजी हैं।

तीसरे ने देशाटन में शहीद हुए नारायण स्वामी को पहला सत्याग्रही माना।

सभी निबंध जाँच कर वापस दिए गए। 'ठीक है' ऐसा प्रमाणपत्र भी दिया गया।

पर बापूजी ने तो सभी बच्चों को अनुत्तीर्ण ठहराया। सभी के मन विचलित हुए। तो फिर पहला सत्याग्रही कौन?

बापू ने कहा - "पहला सत्याग्रही हमारा थंबी नायडु नहीं, भक्त प्रह्लाद है।"

अर्थात बापूजी कुछ नया नहीं कह रहे थे। सिर्फ़ अपने से पूर्व जो महान सत्याग्रही हो चुके थे, उनका अनुसरण कर रहे थे। यह बात बापूजी जीवन भर ज़ोर देकर कहते रहे - "मुझे कुछ नया नहीं कहना। सत्य और अहिंसा पहाड़ों की तरह पुराने हैं।" इतना ही नहीं मानव जीवन के संदर्भ में वे सत्य और अहिंसा को व्यवहार में लाते थे, जीकर दिखाते थे। यह उनकी अनोखी मौलिकता थी।"

(१७)

एक बार कूड़ेदान में प्रभावती बहन कुछ ढूँढ़ रही थीं। माँ कस्तुरबा ने उन्हें देखा और उनके पास जाकर पूछा -"बहन, क्या ढूँढ़ रही हो?"

प्रभावती - "बा, एक छोटा, हरा कागज़ ढूँढ़ रही हूँ।"

बा - "ऐसा कौन-सा कागज़ है, जिसे इस तरह ढूँढ़ रही हो? कोई लेख है?"

प्रभावती - नहीं, आँखों पर रोशनी न आए इसलिए लालटेन के आगे रखने का छोटा-सा हरा कागज़ है। वह बापू का है। लालटेन साफ करते समय मुझसे गिर गया। वही ढूँढ़ रही हूँ।

बा बापू के पास गईं। बा को बापू के साथ लड़ने का अधिकार था। उन्होंने बापू से गुस्से में पूछा - “छोटी बच्ची को परेशान कर रहे हो? कब से एक छोटा-सा कागज़ ढूँढ़ रही है।”

बापू - “छोटा कागज़ है बात सही है। लेकिन इसीलिए उसका कार्य छोटा नहीं हो जाता। वह अपने स्थान पर अत्यंत महत्त्वपूर्ण था। उसे फेंकने की क्या ज़रूरत थी? उसे ढूँढ़कर उसकी सही जगह पर रखना ही चाहिए। ढूँढ़ने दो। अच्छा ही कर रही है।”

प्रभावती को वह कागज़ मिला। उसे उसकी जगह रखा गया।

(१८)

बालक मोहन और उसके भाई ने अपने एक दोस्त की दोस्ती के कारण माँसाहार शुरू कर दिया। स्वाद के लिए या फिर शौक के लिए माँसाहार नहीं करना था। मज़बूत बनने, विदेशियों से न दबने, अंग्रेज़ों को हराकर आज़ाद होने के लिए माँसाहार शुरू किया। बालक मोहन वैष्णव संस्कार में पला-बढ़ा था। माँस खा तो लिया, पर बालक मोहन को पूरी रात ऐसा लगा मानो शरीर के भीतर बकरा ज़िंदा है और रो रहा है। फिर भी बालक मोहन का यह प्रयोग साल भर तक चलता रहा। पाँच-छह बार माँसाहार किया। ऐसे अवसर पर ‘आज भूख नहीं है’ वैसा झूठ बोलना मोहन को सिर पर भारी आघात करने जैसा लगता था। झूठ, सो भी माँ के सामने। इस तरह मन रोता रहता। माता-पिता को धोखा देना और झूठ बोलना माँस खाने से भी ज़्यादा बुरा है, ऐसा विचार मोहन के मन में आया। मोहन ने यह निश्चय किया कि उनके मरने के बाद स्वतंत्र होने पर खुले रूप में माँसाहार करेंगे, तब तक माँसाहार का त्याग करेंगे। यह फ़ैसला

अपने मित्र को सुना दिया। इस तरह वे माँसाहार से मुक्त हुए।

दूसरे एक रिश्तेदार की संगत में सिगरेट पीने का शौक हुआ। पहले तो संठा ढूँढ़कर फूँकना शुरू किया। उस समय उन्हें लगा की सिर्फ़ धुआँ निकालने में ही कितना मज़ा आता है! एक पौधे की टहनियों से धुआँ निकलता था, उसे आज़माकर देखा। नौकरों के पास से पैसे चुराना शुरू किया। ऐसे कार्यों के लिए पैसे नहीं मिलते, इसलिए बड़ों की हुक्मशाही खलने लगी। ऊबकर आत्महत्या करने का निर्णय किया। धतूरे के बीज ज़हरीले होते हैं। उसे खाने के लिए भगवान के दर्शन कर निकले। मौत का डर लगा। हिम्मत नहीं हुई। भगवान का दर्शन कर शांत होकर घर वापस आ गए।

इस चोरी के दोष से मुक्त हुए, वह भी पितृभक्ति की सहायता से। पिता को ठगना नहीं चाहिए, ऐसा उन्होंने स्वयं निश्चय किया। माँसाहारी भाई ने पच्चीस रुपए का कर्ज़ ले लिया था। कर्ज़ को कैसे चुकाया जाय यह दोनों भाइयों के लिए समस्या थी। भाई के हाथ में सोने का कड़ा था। उसमें से तोला भर सोना कटवाकर कर्ज़ अदा किया गया।

नन्हे मोहन का मन बेचैन था। आज से चोरी न करने का संकल्प किया। लेकिन इतना पर्याप्त नहीं था। उन्हें लगा कि पहले की गई गलतियाँ भी पिता के पास जाकर स्वीकार करनी चाहिए। कुछ भी करें, पर ज़बान न खुलती थी। पिताजी गुस्सा होंगे? वे क्या सज़ा देंगे? बिना माफ़ी माँगे मन शांत होनेवाला नहीं था। पत्र लिखकर काँपते हाथों से पिताजी के हाथों में दिया। पत्र में सब दोष स्वीकार किए और दंड माँगा। यह विनती की कि मेरे अपराध के लिए अपने को कष्ट में न डालें और प्रतिज्ञा की कि भविष्य में फिर ऐसा अपराध नहीं करूँगा।

पिताजी ने पत्र पढ़ा। आँखों से मोती की दो बूँदें टपकीं। पत्र भीग गया। क्षणभर तक आँखें मूंद लीं। पत्र फाड़ डाला।

पढ़ने को बैठे थे। पुनः लेट गए। मोहन की आँख में भी आँसू आ गए। बड़े होकर उन्होंने लिखा - उन मोती रूपी अश्रु बिंदुओं के प्रेमबाण ने मुझे वेध दिया था। मैं शुद्ध हो गया। इस प्रेम को तो अनुभवी ही जान सकता है। ....यह मेरे लिए अहिंसा का प्रथम पाठ था। मैं जानता हूँ कि मेरे द्वारा गलती कबूल कर लेने से पिताजी मेरे विषय में निर्भय हो गए। मुझ पर उनका महान प्रेम और बढ़ गया।

(१९)

एक बार बा बीमार पड़ी थीं। मुश्किल से बची थीं। बीमारी का दौरा फिर पड़ा। कोई भी उपचार काम न आया, तो बापूजी ने निसर्गोपचार की बात की। बा से नमक और द्विदल छोड़ने की विनती की। उस विषय के प्रसिद्ध लेख पढ़ाए, समझाए। किंतु बा नहीं मानीं।

बा ने कहा - "यदि आपको कोई द्विदल और नमक छोड़ने को कहा जाय तो आप भी नहीं छोड़ेंगे।"

यह सुनकर बापू को बहुत दुख हुआ। अपना प्रेम व्यक्त करने का यह अवसर देख उन्हें हर्ष भी हुआ। बोले - "मैंने तो एक वर्ष के लिए द्विदल और नमक दोनों छोड़ दिए। तुम छोड़ो या न छोड़ो।"

बा को गहरा पश्चाताप हुआ। वे बोलीं - "मुझे माफ़ करें। आपका स्वभाव जानते हुए भी मुँह से निकल गया। आज से मैं नमक और द्विदल नहीं खाऊँगी। आप अपना वचन वापस ले लें। यह मेरे लिए एक कड़ी सज़ा होगी।"

बापू - "तुम नमक-द्विदल छोड़ोगी तो तुम्हारी सेहत के लिए अच्छा होगा। मुझे विश्वास है उससे तुम्हें लाभ होगा। पर ली हुई प्रतिज्ञा मुझसे तोड़ी नहीं जाएगी। मुझे तो लाभ ही होगा। तुमने जो छोड़ने का निश्चय किया है उस पर कायम रहने में तुम्हें मदद मिलेगी।"

बा - "आप तो बड़े ज़िद्दी हैं। किसी की सुनते ही नहीं।"

बा रोकर शांत हुईं। पति-पत्नी के बीच की इस घटना से बापू को सत्याग्रह की चाभी मिल गई। प्रेम द्वारा किए गए त्याग से सामनेवाले का दिल जीता जा सकता है। उसके जीवन में कल्याणकारी परिवर्तन लाने में सहायक होना ही सत्याग्रह का उद्देश्य है। बापू इस घटना के बारे में कहते हैं, "मैं उसे अपने जीवन के मधुर संस्मरणों में से एक मानता हूँ।"

(२०)

१५ अगस्त, १९४७, भारत की आज़ादी का दिन। सातों समंदर पर जिसका राज्य था, जिसके साम्राज्य का सूर्य कभी अस्त नहीं होता था, उस ब्रिटिश साम्राज्य की शांतिपूर्वक विदाई हुई। भारतवासियों ने सत्ता की बागडोर संभाली।

इस ऐतिहासिक दिन राष्ट्रपिता कहाँ थे? उस दिन को पाने के लिए जिसने सबसे ज़्यादा योगदान दिया, वे उस दिन क्या कर रहे थे? आज़ादी मिल गई। अभी भी बहुत काम करना बाकी है। अब तक भारतवासियों में कौमी सद्भाव नहीं पनपा। गांधीजी राष्ट्रपिता थे। वे दुखी देशवासियों के साथ थे। कलकत्ते में कौमी दंगे हो रहे थे। बापूजी उस कौमी आग में आम जनता के साथ अडिग खड़े रहे।

आज़ादी की रात बापू किसके घर सोए? बेलियाघाट कलकत्ता का बहुत गरीब और खतरनाक इलाका था। गरीबों के बेली (मददगार) बापू ने वहाँ जाकर रहना पसंद किया। एक छोटे-से मकान में उनका निवास था।

बापू का बिस्तर चारपाई पर लगाया गया। शेष सभी ने वहाँ जो कुछ भी मिला उसे ज़मीन पर बिछाकर सोने की तैयारी की।

बापू आए। सोने की व्यवस्था देखकर बोले - "आप सभी ज़मीन पर सोएँगे। मैं चारपाई पर सोऊँ, यह कैसे हो सकता है? मेरा बिस्तर भी ज़मीन पर लगाओ।"

पुरानी चारपाई भी बापू को रास न आई। चारपाई छत्रपलंग जैसी लगी। सबके साथ अपना बिस्तर ज़मीन पर लगवाकर ही सोए।

राजधानी दिल्ली के साथ ही देश भर में आज़ादी का जश्न मनाया जा रहा था। ऐसे समय राष्ट्रपिता बापू को भी क्या-क्या करना रह गया है, यह दीन-दुखियों, वे गरीबों के साथ रहकर प्रत्यक्ष आचरण से दिखा रहे थे।

(२१)

गांधीजी विलायत से बैरिस्टर बनकर आए थे। वकालत नहीं चली, इसलिए जवान मोहनदास को आजीविका के साधन ढूँढ़ने की नौबत आई। वकील होने के कारण ठीक-ठाक अर्ज़ियाँ लिख लेते थे। मुफ़्त में अर्ज़ी लिखने से गुज़ारा कैसे होता?

अदालत में खड़े होकर दलील देना रास नहीं आया। वकालत के अलावा दूसरा व्यवसाय ढूँढ़ने की नौबत आई।

बापू को ऐसा लगता था कि वे शिक्षक बन सकते हैं। अंग्रेज़ी का

अच्छा-ख़ासा अभ्यास किया है, ऐसा उनका मानना था। किसी स्कूल में दसवीं की कक्षा में अंग्रेज़ी पढ़ाने को मिले तो वे पढ़ाने के लिए तैयार भी थे, जिससे भूखों मरना न पड़े।

एक दिन अख़बार में एक विज्ञापन देखा कि फ़लाँ हाइस्कूल में अंग्रेज़ी के एक शिक्षक की दैनिक एक घंटे की आवश्यकता है। तनख़्वाह ७५/- रुपए है। उन्होंने अर्ज़ी की। साक्षात्कार के लिए बुलाया गया। जवान वकील शिक्षक बनने की लालच से उत्साहपूर्वक गए। परंतु जब प्राचार्य को पता चला कि युवक बी.ए. नहीं है तो उन्होंने दुख जताया और नसीहत दी।

युवक - "पर मैंने लंदन की मैट्रिक पास की है। लैटिन मेरी दूसरी भाषा थी।"

प्राचार्य - "पर हमें ग्रैज्युएट ही चाहिए।"

बैरिस्टर गांधी स्कूल शिक्षक होने के लिए अयोग्य ठहरे।

गांधीजी में बैरिस्टर होने के बावजूद आजीविका के लिए शिक्षक या दूसरा कोई भी प्रामाणिक कार्य करने के पीछे नम्रता, सरलता और सच्ची व्यावहारिकता थी। उनमें सारी मानवजाति के शिक्षक होने के बीज पड़े थे।

(२२)

आगा ख़ाँ महल में बा-बापू नज़रबंद थे। उनके साथी और जेल के अधिकारी श्री कटेली ७५ साल की बा के साथ कैरम खेलते थे। बा को जिताने के लिए सभी प्रयासरत रहते थे। कभी-कभी बापू भी खेल देखने के लिए खड़े रहते। बीच में एकाध बार खेल लेते।

कुछ व्यायाम हो इसलिए खुले वातावरण में खेलने का कार्यक्रम

था। बरसात में जेल अधिकारी ने एक कमरे में टेबल टेनिस खेलने की सुविधा कर दी।

सभी ने तय किया की इस नए खेल का शुभारंभ बा-बापू से करवाया जाय।

हाथ में रैकेट पकड़े दोनों खिलाड़ियों की तरह खड़े हुए। बापू ने न जाने कितने बरसों बाद हाथ में रैकेट पकड़ा होगा। पहली बारी बा की थी।

बा - "देखो, बेईमानी मत करना।"

बापू - "तुमसे मैं हारता ही हूँ। तुमसे हारने में मुझे बड़ा मज़ा आता है।" सभी खिल-खिलाकर हँस दिए।

बापू ने सभी से कहा - "यदि महिलाओं से पुरुष अपनी थोड़ी-सी हार मान लें, तो महिलाओं की शक्ति का दुगुना फ़ायदा होता है। समाज के कई प्रश्न सुलझ जाते हैं।"

बा की ओर घूमकर बापू ने कहा - "तुमसे हारने में मुझे सफलता ही मिलती है। तुम्हारे साथ होने से ही मेरी शोभा है।"

एक-दूसरे से हार स्वीकार कर विजयी होनेवाले इस अनोखे दम्पत्ति की ओर सभी प्रसन्नता से देखते रहे थे।

(२३)

गांधीजी का अर्थ है काम का नियाग्रा जलप्रपात। साथ ही आराम कर लेने की उनमें अद्‌भुत शक्ति थी। थकने पर थोड़ी देर के लिए सो जाते। कुछ ही पलों में फिर से काम के लिए तरोताज़ा।

सुबह मालिश करवाने के बाद पानी के टब में ही थोड़ी देर सो जाते। इसी बीच मनुबहन को उनकी दाढ़ी बनाने का काम निबटाना होता।

मनुबहन को लगता कि बापू मुश्किल से सोए हैं। जाग जाएँगे यह सोचकर हजामत का काम रोक देतीं। बापू काम निकलवाने में बड़े माहिर। उन्होंने मनुबहन को समझाया -"यदि मैं सो भी जाता हूँ तो भी तुम्हें हजामत करनी चाहिए। तभी मैं ज़्यादा सो पाऊँगा। मेरा काम भी हो जाएगा। पर अभी तुमने यह नहीं सीखा। इसलिए उसका फल मुझे भुगतना है। जागते रहना है। काम रुके नहीं इसकी चेतावनी भी देते रहना है।"

"इस तरह जब तक सो सकता हूँ तब तक चिंता नहीं। सोने की यह शक्ति जिस दिन चली जाएगी, तब तुम समझना कि मेरा पतन है। और मैं समझूँगा कि यह पतन मुझमें रहे दंभ के कारण है। रामनाम मेरे हृदय में नहीं है। जब तक इस तरह सोने की शक्ति ईश्वर देता है, तब तक मुझे चिंता नहीं है। ईश्वर पर श्रद्धा रखकर तुम्हें अपना काम जारी रखना चाहिए। सब पर दया करनेवाला वह है। वह किसी का बुरा नहीं करता। मनुष्य ख़ुद ही अपना बुरा करता है और कहता है 'ईश्वर ने बुरा किया'।

(२४)

एक बार देशबंधु चित्तरंजनदास दार्जीलिंग में गंभीर रूप से बीमार थे। उनका हाल-चाल पूछने गांधीजी वहाँ गए हुए थे। लौटते समय 'ढाका मेल' पकड़कर बापू को नवाबगंज गाँव में एक कार्यक्रम में जाना था। रास्ते में पहाड़ का थोड़ा हिस्सा रेल की पटरी पर टूटकर गिरने से 'ढाका मेल' छूटने की संभावना थी। समय पर न पहुँचना गांधीजी को मंज़ूर नहीं था।

एक साथी ने ख़ास गाड़ी के विषय में बताया। उन्होंने स्वीकार

कर लिया। वाइसराय को दिया हुआ समय जितनी सख़्ती से निभाता हूँ, उतनी सख़्ती से मुझे अपने लोगों को दिए गए समय को भी निभाना चाहिए।

ख़ास गाड़ी का किराया १,१४०/- रुपए अदा किए और निश्चित कार्यक्रम में सही समय पर उपस्थित हुए।

(२५)

गांधीजी बिहार के चंपारण जिले में यात्रा कर रहे थे। उन्होंने कई स्वयं सेवकों को आस-पास के गाँवों में स्कूल खोलने और चलाने के कार्य में लगाया।

एक बार बापू ने बा से कहा - "बच्चों के लिए तुम भी यहाँ स्कूल शुरू करो।"

बा - "स्कूल खोलकर मैं क्या करूँ? क्या इन बच्चों को गुजराती पढ़ाऊँ? उनकी भाषा मुझे नहीं आती है। मैं उनके साथ बात कैसे करूँगी?

बापू - "बच्चों की शिक्षा का पहला पाठ स्वच्छता है। किसानों के बच्चों को इकट्ठा करो। उनके आँख-दाँत देखो। उन्हें स्नान कराओ। सफाई की आदत डालो। यह कम शिक्षा नहीं है। यह आज से ही शुरू कर सकती हो।"

इस तरह बा की भी पाठशाला शुरू हुई।

(२६)

यरवदा जेल में रोटी बनानेवालों ने बिल्ली पाली थी। उसने दो बच्चे दिए थे।

बिल्ली अक्सर आकर बापू के खुले मुलायम पैरों के पास लिपटकर बैठती। अब उसके बच्चे भी साथ आने लगे। एक बच्चा प्यार से खेलने लगा। बिल्ली की पूँछ को चूहा मानकर दूर से आता और पूँछ को मुँह में ले लेता। उस समय बापू रस्किन बॉन्ड की किताब पढ़ रहे थे। पढ़ना बंद करके देखने लगे।

धीरे-धीरे बिल्ली के बच्चे बापू से हिल-मिल गए। प्रार्थना के समय बापू की गोद में बैठते। सबके साथ खेलते। खाने के समय उछल-कूद करते और म्याऊँ-म्याऊँ का शोर मचा देते।

सरदार वल्लभभाई पटेल बच्चों को ज़रा चिढ़ाते। खाना ढँकने की तार की जाली बच्चों पर रख देते। अंदर बच्चे घबरा जाते।

एक बार एक बच्चा बहुत घबरा गया। जाली को सिर मारते-मारते बरामदे के छोर तक ले गया। वहाँ उसके नीचे से बाहर निकला। नन्हे बच्चे की बुद्धि को देखकर सभी प्रभावित हुए। अभी भी उसकी घबराहट शांत नहीं हुई थी। बापू को दया आई।

थोड़ी दूर जाकर उसने शौच की तैयारी की। ज़मीन खोदकर गड्डा किया। फिर मिट्टी से ढँक दिया। वहाँ मिट्टी ज़्यादा नहीं थी, इसलिए दूसरी जगह गया। वहाँ क्रिया पूरी तरह से पूर्ण की। गड्डा ढँकने में दूसरे बच्चे ने उसकी मदद की।

बिल्ली के बच्चों द्वारा स्वच्छता का प्रयास देख बापू ने कहा - "इन बच्चों पर आकाश से पुष्पवृष्टि करनी चाहिए।"

मीरा बहन को खत लिखा। उसमें बिल्ली के बच्चों की स्वच्छता

की शिक्षा के बारे में लिखे बिना नहीं रह सके।

"हमारे यहाँ बिल्ली के दो प्यारे से बच्चे हैं। माता के मूक आचरण से वे शिक्षा लेते हैं। माता सारे समय उनकी आँखों के सामने रहती है। उनकी मूल वस्तु आचरण है।"

(२७)

यरवदा जेल में गांधीजी के साथ सरदार वल्लभभाई पटेल और महादेवभाई भोर में चार बजे उठकर प्रार्थना करते थे। प्रार्थना के बाद नींबू और शहद का पानी पीते थे। शहद और नींबू के रस पर गरमा-गरम पानी डाला जाता था। उसके ठंडा होने तक राह देखनी होती थी। इस दौरान पढ़ने का कार्यक्रम चलता। गांधीजी गरम पानी पर कपड़े का टुकड़ा रखना शुरू कर देते।

एक दिन उन्होंने कहा - "महादेव, पानी को इस टुकड़े से क्यों ढँकता हूँ? छोटे-छोटे इतने सारे कीटाणु हवा में होते हैं कि उनका पानी की भाँप के कारण अंदर गिरना संभव है। इसलिए इस कपड़े से ढँकता हूँ, ताकि बचा जा सके।"

यह सुनकर सरदार वल्लभभाई से रहा नहीं गया। वे बोले - "बापू, इतनी हद तक हम अहिंसा का पालन नहीं कर सकते।"

गांधीजी ने हँसकर कहा - "अहिंसा न सही, स्वच्छता का पालन तो कर सकते हैं।"

(२८)

'संग्रह किया साँप भी काम का' यह मुहावरा कहाँ से आया इस पर यरवदा जेल में एक बार चर्चा चली।

बापू ने एक कहानी कही - "एक बुढ़िया के घर साँप निकला। लोगों ने उसे मार डाला। बुढ़िया ने उसे दूर फेंकने के बजाय घर की छत पर डाला। आसमान में एक चील उड़ रही थी। वह कहीं से मोती की माला लाई थी। उसने साँप को देखा। उसे माला से ज़्यादा कीमती वस्तु जानकर माला को छत पर डाल साँप उठा ले गई। वृद्धा ने मरे साँप को संभाल कर माला पाई।"

सरदार ने दूसरी कहानी कही - "एक बनिये के यहाँ साँप निकला। उसे मारनेवाला कोई नहीं मिला। किसी की मारने की हिम्मत नहीं हुई। इसलिए बनिया ने साँप को पतीले के नीचे ढँक दिया। रात को चोर आए। पतीले के नीचे कुछ होगा सोचकर खोलते ही अपने प्राणों से हाथ धो बैठे।"

इस तरह हर एक ने अपने स्वभाव अनुसार विशिष्ट कहानी कही।

(२९)

जोहानिसबर्ग में गांधीजी भोर में ही प्रार्थना करते। कभी चक्की पर गेहूँ पीसते, चूल्हा जलाते या केतली में पानी गरम करने के लिए रखते।

मकान के पाखाने की बाल्टी से छह से दस फ़ीट ऊँची एक टँकी साफ होती थी। नहाने-धोने का पानी भी उसी में इकट्ठा होता था। उस टँकी को खाली करने के लिए हफ़्ते में एक बार म्युनिसिपालिटी की

दो घोड़ों से खींची जानेवाली लोहे की टँकी लेकर हब्शियों की एक टुकड़ी आती थी।

सफाई का काम पूरा होते ही स्वच्छ होकर, सर्दी के मौसम में कपड़ों की कमी के कारण काँपते हुए हब्शी गांधीजी के पास आते। उनके टमलर में अपने हाथ से बनाई हुई गरमा-गरम चाय केतली से डालने का काम गांधीजी किया करते थे।

(३०)

सेवाग्राम में एक बार अमेरिकी मिशनरी डॉ.जॉन मॉट ने गांधीजी से पूछा - "आपके जीवन का सबसे सृजनात्मक अनुभव कौन-सा है, जिससे एक नए जीवन का निर्माण हो सकता है? उस अनुभव के बारे में कुछ बताइए।"

गांधीजी ने कहा कि ऐसे अनुभव तो बहुत हैं। मेरे जीवन की राह बदलनेवाली एक स्मृति इस समय याद आ रही है।"

इतना कहकर बापू ने मेरित्सबर्ग की एक घटना का वर्णन किया। वे चौबीस साल के जवान बैरिस्टर थे। दक्षिण अफ्रीका में सेठ अब्दुल्ला के केस के सिलसिले में बुलाने पर डर्बन पहुँचे। एक सप्ताह बाद सेठ ने उन्हें प्रिटोरिया भेजा।

पहले दर्जे का टिकट लेकर उन्हें गाड़ी में बिठाया गया। लगभग नौ बजे गाड़ी नाताल की राजधानी मेरित्सबर्ग पहुँची। एक गोरा यात्री डिब्बे में चढ़ा। वह 'रंग-बिरंगे' गांधीजी को देखकर झिझक गया। बाहर जाकर एक दो अमलदार को साथ ले आया। गांधीजी कुछ नहीं बोले। दूसरा एक अमलदार आया। उसने गांधीजी को आख़िरी डिब्बे में जाने के लिए कहा।

गांधीजी ने कहा - "मेरे पास पहले दर्जे का टिकट है।"

"उससे क्या होता है? मैं तुमसे कहता हूँ कि तुम्हें गाड़ी के अंतिम डिब्बे में जाना ही होगा!"

"मुझे इस डिब्बे में डर्बन से बिठाया गया है। मैं इसी में जाना चाहता हूँ।"

"यह नहीं हो सकता। तुम्हें उतरना ही पड़ेगा। यदि नहीं उतरोगे तो सिपाही तुम्हें उतारेगा।"

"सिपाही भले उतारें, पर मैं स्वयं नहीं उतरूँगा।" युवक गांधी ने दृढ़ता से जवाब दिया।

सिपाही आया। उसने गांधीजी का हाथ पकड़ा और धक्का मारकर उन्हें डिब्बे से नीचे उतार दिया। उन्होंने दूसरे डिब्बे में जाने से इनकार कर दिया। गाड़ी रवाना हुई।

गांधीजी प्रतीक्षालय गए। बटुआ अपने हाथ में रखा। दूसरे सामान को उन्होंने छुआ तक नहीं। रेलवेवालों ने उसे हटवाकर कहीं रखा।

कड़ाके की सर्दी थी और वह भी दक्षिण अफ्रीका के पहाड़ी प्रदेश की। ओवरकोट सामान के साथ था। उसे मँगाने की हिम्मत नहीं हुई। फिर अपमान होगा। सर्दी बढ़ रही थी। युवक गांधी का आत्ममंथन और धर्ममंथन चल रहा था। अपने अधिकार के लिए लड़ूँ या यहीं से देश वापस चला जाऊँ? या ऐसे अपमानों को सहन करते हुए केस ख़त्म कर वतन लौट जाऊँ? केस छोड़कर वापस जाना नामर्दी होगी। यह जो अपमान सहा वह ऊपरी दर्द है, भीतर के महारोग का चिह्नमात्र। महारोग तो रंगद्वेष है। यदि उस महारोग को मिटाने की शक्ति है, तो उस शक्ति का उपयोग करना होगा। ऐसा करते हुए स्वयं पर जो भी कष्ट आएँ, उन्हें बर्दाश्त करना होगा। ऐसा निश्चय

कर वे दूसरी गाड़ी में जैसे-तैसे आगे बढ़ने के लिए तैयार हो गए।

डॉ. मॉट से गांधीजी ने आगे कहा - "इसमें सृजनात्मक अनुभव यह है कि मुझमें जीवन के प्रति डर बैठ गया था। मैं अंधेरे प्रतीक्षालय में दाखिल हुआ, वहाँ एक गोरा था। मुझे उससे डर लगा। मेरा धर्म क्या है? मैंने अपने आप से सवाल पूछा। मुझे अपने वतन वापस जाना चाहिए या ईश्वर के सहारे आगे बढ़ना चाहिए? मैंने निश्चय किया कि रहना और सहना होगा। उस दिन से मैंने सकारात्मक अहिंसा की शुरूआत की।

जवाहरलाल नेहरू का मानना था कि गांधीजी में सबसे महान गुण निर्भयता का है। ख़ुद नेहरू में भी निर्भयता थी, इसलिए वे उसकी क़द्र करते थे। उनका कहना था कि गांधीजी में इस तरह की निर्भयता थी कि उनके संपर्क में आनेवाले हर किसी में निर्भयता का संचार हो जाता।

गांधीजी की निर्भयता का मूल सबके प्रति उनके प्रेम में था। अन्यस्मात् विभेति - आदमी दूसरों से डरता है। लेकिन उनके लिए कोई दूसरा था ही नहीं, सभी आत्ममय, राममय हों, तो कोई दूसरों से डरेगा नहीं, बल्कि दूसरों के प्रति उसके मन में प्रेम की धारा प्रवाहित होगी।

गांधीजी उस रात सर्दी में ठिठुरते रहे। भयभीत युवक गांधी के हृदय में अद्वेष की, अबैर की, आत्मसर्वस्व के बलिदान की और सकारात्मक प्रेम की भूमिका तैयार होने लगी और डर ग़ायब हो गया। यहीं से सत्याग्रह के अमोघ शस्त्र का जन्म हुआ।

(३१)

एक दिन फ़ीनिक्स आश्रम में शाम की प्रार्थना के बाद बा-बापू के बीच गृहस्थाश्रम को लेकर एक अनोखा संवाद हुआ।

दक्षिण अफ़्रीका की सरकार ने एक नया कानून बनाया। इस कानून के अनुसार हिंदू, इस्लाम या पारसी धर्मविधि के अनुसार सम्पन्न हुए विवाह अमान्य होंगे।

बापू - "सुनती हो क्या? तुम आज से मेरी पत्नी नहीं रहीं।"

बा - "यह क्या कह रहे हो? तुम हर रोज़ एक नया मामला ढूँढ़ निकालते हो।"

बापू - "मैं नहीं कहता। ऐसा जनरल स्मट्स कह रहे हैं। उनकी सरकार ने एक नया कानून बनाया है। उसके अनुसार ईसाई विवाह की तरह हिंदू, मुसलमान तथा पारसियों के विवाह अदालत में रजिस्टर्ड नहीं किए जाते हैं, इसलिए अवैध हैं। अतः हमारी शादीशुदा औरतें इस कानून के अनुसार अब रखैल हो गई हैं।"

बा - "उसने कहा? उसे कहाँ से ऐसा सूझता है?"

बापू - "तुम बहनें अब क्या करोगी?"

बा - "हम क्या करें?"

बापू - "क्यों? जैसे हम लड़ते हैं, वैसे तुम भी लड़ो। अपनी आबरू बचानी है तो जेल जाने के लिए भी तैयार हो जाओ।"

बा - "क्या औरतें जेल जा सकती हैं?"

बापू - "क्यों नहीं जा सकतीं? पुरुष सुख-दुःख सहते हैं। स्त्रियाँ क्यों नहीं सह सकतीं? राम के साथ सीताजी भी वन गईं। हरिश्चंद्र के साथ तारामती और नल के साथ दमयंती - सभी ने साथ में अपार दुःख सहे थे।

बा ने हँसकर कहा - “आप मुझे जेल भेजना चाहते हैं न? अब इतना ही बाकी है! क्या वहाँ का भोजन मेरे अनुकूल होगा? क्या फलाहार की मंज़ूरी मिलेगी?”

बापू - “न दें तब तक उपवास करना।”

बा - “यह तो आपने मुझे मारने का रास्ता बताया।”

बापू खिल-खिलाकर हँस पड़े और बोले - “तुम जेल में मरोगी तो जगदंबा की भाँति तुम्हारी पूजा करूँगा।”

बा ने कहा - “मेरा नाम सत्याग्रहियों में पहला रखना।”

और पहले सोलह सत्याग्रहियों में बा सबसे आगे थीं।

सन् १९४२ के ‘भारत छोड़ो आंदोलन’ के दौरान २२ फ़रवरी १९४४ को आगा ख़ाँ महल के कारावास में बा बापू की गोद में सिर रखकर हमेशा के लिए सो गईं। बापू की आँखों में अश्रुबिंदु चमक उठे।

(३२)

दक्षिण अफ़्रीका के सत्याग्रह आंदोलन में कई सत्याग्रही भाइयों की गोलीबारी में मृत्यु हो गई। आंदोलन के बाद उनकी विधवा औरतें बापू से मिलने सेठ पारसी रुस्तमजी के घर आईं।

बापू उठकर उनके पास गए। उनकी वंदना की। सभी रो पड़ीं।

बापू उन्हें आश्वासन देने लगे - “माताओं आप रोएं नहीं। यदि एक लंबी बीमारी के बाद आपके पतियों की मृत्यु हुई होती तो उनके बारे में दुनिया कुछ भी नहीं जानती। देश की ख़ातिर गोली लगने से वे शहीद हुए हैं। उन्हें भाग्यशाली मानना चाहिए।”

एक बहन ने बापू के पैर पकड़ लिये। उसके आँसुओं से उनके पैर भीग गए। बापू ने दुखी हृदय से दिलासा देते हुए करुणा भरे परंतु दृढ़ स्वर में कहा - “बहन, तुम्हारी जैसी बहनों का दुख मुझसे सहा नहीं जाता। वह तभी शांत हो सकता है जब सरकार मुझे भी मार दे और मेरी पत्नी की स्थिति भी तुम्हारे जैसी हो।”

गांधीजी की करुणा भरी सहृदयता से बहनों को दिलासा मिला।

(३३)

गांधीजी ने साबरमती के तट पर ‘सत्याग्रह आश्रम’की स्थापना की। वहीं से वे अपनी सभी गतिविधियाँ चलाते थे। आश्रम का एक कार्यकर्ता बाज़ार से ख़रीददारी का काम करता था। वह दो आने की वस्तु को ढाई आने की लिखकर चोरी करता था। गांधीजी के दो साथियों को पता चला और यह बात गांधीजी तक पहुँची।

गांधीजी ने उस कार्यकर्ता को बुलाया। पहले उसने चोरी करने की बात नहीं कबूली। बाद में कबूल कर लिया। गांधीजी को गहरा आघात लगा। नाताल के समय से वह गांधीजी का नज़दीकी साथी था।

गांधीजी सोचने लगे - ‘इस आश्रम को ‘सत्याग्रह आश्रम’ का नाम कैसे दिया जा सकता है? मुझमें ही कुछ असत्य छिपा है, जिसे मैं मिटा न सका।’

सभी साथियों को इकट्ठा किया गया। जो दूसरे गांव में थे उन्हें भी बुलाया गया। बापू ने सभी के सामने अपने हृदय की व्यथा कही। उनके मन में सत्य के आगे बाह्य प्रतिष्ठा की कौड़ी भर कीमत न थी। ‘सत्याग्रह आश्रम’ नाम रद्द कर ‘उद्योग मंदिर’ नाम रखने से आश्रम की प्रतिष्ठा दुनिया की दृष्टि में कम हो सकती है। परंतु गलत

नाम धारण करने से बचना चाहिए। चर्चा बहुत हुई। सभी ने अंत में यह निर्णय किया कि नदी के तट पर जिस जगह प्रार्थना होती है उसे 'सत्याग्रह आश्रम' नाम दिया जाय। शेष संस्था 'उद्योग मंदिर' के नाम से जानी जाय। आगे चलकर योग्यता प्राप्त करें, तभी 'सत्याग्रह आश्रम' नाम धारण करें।

(३४)

गांधीजी नोआखली में 'कौमी' आग को शांत करने के लिए यात्रा कर रहे थे। हत्या से ठीक एक साल पहले ३० जनवरी, १९४७ के दिन वे एक ऐसे गाँव में पहुँचे जहाँ बकरी का दूध अप्राप्य था। उसके बदले उन्हें नारियल का पानी दिया गया। गांधीजी को संग्रहणी हुई। शाम होते-होते उन्हें बहुत कमज़ोरी महसूस होने लगी।

शाम के समय शौचक्रिया के बाद उन्हें पसीना आने लगा। बार-बार उबासी आने लगी। उनके साथ मनु बहन थीं। उन्हें लगा कि बेहोश हो जाएँगे। उन्होंने बापूजी को पकड़ लिया। पसीना पोंछा और दूसरे भाइयों की मदद से बिस्तर पर ले जाकर सुलाया।

मनु बहन ने शीघ्र डॉ. सुशीला नायर को ख़त लिखा।

थोड़ी देर में बापू ने आँखें खोलीं। उन्होंने मनु बहन से कहा - "तुमने दूसरे भाइयों को मदद के लिए बुलाया यह मुझे अच्छा नहीं लगा। तुम अभी छोटी हो इसलिए तुम्हें क्षमा करता हूँ। ऐसे समय में भक्ति के साथ राम का नाम लेना चाहिए। मैं भी राम का नाम ले रहा था। अब इस बीमारी की बात किसी को बताना नहीं; सुशीला को भी नहीं। मेरा असल वैद्य-डॉक्टर तो राम है। उसे मुझसे जब तक काम लेना होगा तब तक वह मुझे जीवित रखेगा, नहीं तो यहाँ से उठा लेगा।"

मनु बहन चौंकी। ख़त के टुकड़े किए। बापू सब तमाशा समझ गए। बोले - "अरे! तुमने ख़त भी लिख डाला था?"

मनु बहन ने हामी भरी तो बोले - "आज ईश्वर ने तुम्हें और मुझे बचा लिया। सुशीला गाँव का काम छोड़कर यहाँ दौड़कर आती, तो ईश्वर तुम पर और मुझ पर नाराज़ होते।"

(३५)

बात उस समय की है जब दक्षिण अफ्रीका के जोहानिसबर्ग में गांधीजी वकालत करते थे। ऑफ़िस घर से तीन मील दूर था। एक बार गांधीजी के साथी श्री पोलॉक ने उनके तेरह वर्षीय पुत्र मणिलाल को ऑफ़िस से एक किताब घर ले आने के लिए कहा था। मणिलाल भूल गए। बात गांधीजी तक पहुँची। वे मणिलाल के पास गए। दृढ़ता के साथ अत्यंत प्रेम से बेटे से कहा - "रात अंधेरी है, रास्ता विकट है। आने-जाने के छह मील होंगे। यदि तुमने कबूल किया है तो ऑफ़िस जाकर मि. पोलॉक को किताब लाकर देनी चाहिए।"

यह सुनकर बा और घर के सभी सदस्य दुविधा में पड़ गए। बापू को ऐसा आग्रह नहीं करना चाहिए। यह प्रश्न भी उठा।

ऑफ़िस के साथी कल्याण भाई ने कहा - "चाहें तो मैं किताब ले आऊँ या मणिलाल के साथ मुझे जाने दिया जाय।"

गांधीजी ने दूसरा विकल्प स्वीकारा।

तेरह साल के किशोर बेटे ने देरे रात को भी श्री पोलॉक को किताब लाकर दी। स्वयं लिया हुआ कार्य पूरा करें, इस बात का फूल से भी कोमल और वज्र से भी कठोर पिता ने ठीक ध्यान रखा।

(३६)

नोआखली में कौमी दंगे शांत करने के लिए गांधीजी यात्रा कर रहे थे। एक गाँव से होते हुए दूसरे गाँव सुबह सात बजे पहुँच जाते। पहले लिखवाने का थोड़ा काम करके स्नान करते। स्नान करने के लिए साबुन के स्थान पर एक खुरदरे पत्थर का उपयोग करते थे। इसे मीरा बहन ने बरसों पहले उन्हें दिया था।

एक गाँव में पहुँचने के बाद स्नान की तैयारी करते समय मनु बहन को वह पत्थर नहीं मिला। बापू को बताया - "कल बुनकर के घर रुके थे शायद वहीं रह गया होगा।"

थोड़ी देर के लिए बापू चिंता में पड़ गए और कहा - "वह पत्थर तुम ख़ुद जाकर ढूँढ़ लाओ। तुम्हें अकेले ही जाना है। एक बार ऐसा करने पर दुबारा भूल नहीं होगी।"

मनु बहन - "किसी स्वयंसेवक को साथ ले जाऊँ?"

बापू ने पूछा - "क्यों?"

नोआखली में नारियल और सुपारी के वन हैं। अनजान व्यक्ति रास्ता भटक सकता है। सूनसान रास्ते पर अकेले कैसे जाएँ? दंगाई परेशान करेंगे तो? १५-१६ साल की बच्ची मनु बहन के मन में कई विचार आ गए। परंतु 'क्यों' का उत्तर देने के लिए रुके बिना उठकर चल दीं। जिस रास्ते से चलकर यहाँ आए थे उस रास्ते पर कदमों के निशान देखती हुईं उस गाँव पहुँच गईं।

बुनकर का घर मिला। घर में वृद्धा रहती थी। वृद्धा ने बापू के पत्थर को साधारण पत्थर समझकर फेंक दिया। मनु बहन ने मुश्किल से ढूँढ़ा । पत्थर मिलने पर उन्हें अतिशय आनंद हुआ।

सुबह साढ़े छह बजे की निकली मनु बहन एक बजे बापू के पास

पहुँचीं। पंद्रह मील की दूरी तय की थी। भूख भी ज़ोरों की लगी थी। रूठना अब भी कम नहीं हुआ था। बापू के पास जाकर उनकी गोद में पत्थर फेंककर रो पड़ीं।

बापू ने प्रेम से कहा - "इस पत्थर के कारण तुम्हारी परीक्षा हुई। उसमें तुम सफल हुई। इसमें मुझे ख़ुशी हुई। यह पत्थर पच्चीस साल से मेरा दोस्त है। जेल में या महल में, यह मेरे साथ ही रहा है। ऐसे कई पत्थर मिल जाएँगे पर ऐसी लापरवाही ठीक नहीं है।"

मनु बहन के हृदय से आज के अनुभव का सच्चा उद्गार निकला - "बापूजी, मैंने अगर कभी सच्चे दिल से राम का नाम लिया है तो आज पहली बार।"

बापू ने कहा - "मुझे बहनों को निर्भय बनाना है। यह परीक्षा सिर्फ तुम्हारी ही नहीं, सच पूछो तो मेरी भी थी।"

सच्ची परीक्षा तो उस दिन ईश्वर की थी। शायद ही किसी भक्त ने भगवान की इतनी बड़ी परीक्षा ली हो। सच में उस दिन ईश्वर की लाज रह गई।

(३७)

फ़ीनिक्स आश्रम में छोटे-बड़े सभी आहार-विहार का नियमित पालन करते थे। खाने में मसाला नहीं होता था। कुछ तो नमक भी छोड़ 'अलोनाव्रत' का पालन करते थे।

एक बार किसी विद्यार्थी को स्टेशन के रास्ते में शिलिंग मिला। ऐसे ही ज़ियाफ़त के लिए गए किसी व्यक्ति को तीन पेनी का सिक्का मिला। गांधीजी कुछ दिन बाद जोहानिसबर्ग गए। उस समय वर्ग शिक्षिका ने उस शिलिंग के पकोड़े मँगवाए और तीन पेनी के

चित्र मँगवाकर सब में बाँटे।

यह बात बापू के कानों तक पहुँची। उस शिक्षिका बहन के साथ उन्होंने बात की। और एक विद्यार्थी के साथ बात करते हुए घर और प्रेस के बीच कई चक्कर लगाए। दूसरे लड़कों के साथ भी इसी तरह बात की। अंत में अपने सबसे छोटे पुत्र देवदास को बात करने के लिए अपने साथ ले गए।

आश्रमवासी चिंता में डूबे राह देखते रहे। यह पता चला कि गांधीजी ने थप्पड़ मारे। पहले तो लगा कि देवदास को मारे होंगे। बाद में यह स्पष्ट हुआ कि उन्होंने अपने आप को पाँच थप्पड़ मारे हैं।

दोपहर को उन्होंने खाना खाया। शाम को नहीं। पानी भी छोड़ दिया।

शाम की प्रार्थना के बाद वे अत्यंत दुखी स्वर में धीरे-धीरे बोल रहे थे - "पानी भी कड़वा ज़हर जैसा हो गया है। बच्चे होकर आप बाप को इतना ठग सकते हैं, यह जानकर मेरा दिल दुखी होता है। मुझसे रहा नहीं गया तब मैंने अपने आप को पाँच थप्पड़ मार लिये। किसी और को मैं मारूँ इससे तो यही अच्छा है कि मैं अपने आप को मार लूँ। उसके बिना मुझे इस तरह का व्यवहार कितना दुख देता है, इसका अंदाज़ा नहीं लगाया जा सकता है।"

बापू ने देवदास से भूल स्वीकार करवायी और भविष्य में ऐसा न करने का आश्वासन लिया। और कहा कि अभी भी बच्चों ने सत्य छुपाया है। सब अलग-अलग कह रहे हैं। सच कहने को कोई तैयार नहीं है। झूठ बोलते रहे तो उनका जीवन व्यर्थ है। फिर अपना निर्णय सुनाया कि जब तक बच्चे अपने आप सत्य न कहें तब तक अपने मुँह में अन्न का दाना या पानी की बूँद भी नहीं रखेंगे। सत्य को ढूँढ़ते हुए यदि मौत आ जाए तो इससे अच्छा क्या हो सकता है? फिर उन्होंने कहा कि इस तरह मौत आए तो उस दिन को उत्सव के रूप में मनाना चाहिए।

दूसरे दिन बापू को दूसरे गाँव जाना था। भूखे-प्यासे स्टेशन तक चलते हुए गए। सभी साथ गए, बिना कुछ बोले। चिंतित शिक्षिका ने स्टेशन के पास सब मंज़ूर किया।

ट्रेन आई। सबने बापू से विनती की - "वहाँ पहुँचकर रुस्तमजी सेठ के यहाँ खाना खाकर ही आगे जाना।"

बापूजी शांत और प्रसन्नचित्त से बोले - "मेरे मन को सत्य मिल गया, यही मेरा खाना है।"

(३८)

यरवदा जेल में गांधीजी की देखभाल और सेवा करने के लिए उन्हें कैदी वॉर्ड से अलग रखा गया था।

वॉर्डर अदन सोमाली द्वीप का था। प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान ब्रिटिश सेना छोड़ने के जुर्म में उसे दस साल की सजा हुई थी। वह अदन की जेल से ट्रांसफ़र होकर यहाँ आया था। मुश्किल से कुरान पढ़ लेता था। फुरसत मिलते ही कुरान की आयतें पढ़ता। वह गांधीजी का चहेता बन गया। गांधीजी ने उसकी रिहाई या फिर से उसका अदन जेल में तबादला हो इसलिए आवेदन लिखे।

एक बार वह बड़ी मुश्किल से उसी दिन का 'टाइम्स' अख़बार ले आया। जेल में अख़बार का दर्शन! वह ख़ुशी से गांधीजी के पास गया और अख़बार उन्हें दिया।

गांधीजी जेल के हर एक नियम का पालन करते थे। अयोग्य

नियम हो तो अधिकारियों को सूचित कर उसके विरुद्ध प्राणांत तक लड़ते। फिर भी जेल के छोटे-से-छोटे नियम को नहीं तोड़ते थे। उन्होंने अदन से पूछा - "यह क्या है?"

"महाराज, अख़बार है, आज का अख़बार है। आपके लिए लाया हूँ।"

"यह अख़बार मैं नहीं देख सकता हूँ। यह कानून के ख़िलाफ़ है। तुम इसे वापस ले जाओ।"

अदन निराश हुआ और दुखी मन से बोला - "सब लोग अख़बार देखने के लिए माँगते हैं। बड़ी मुश्किल से लाया हूँ।"

गांधीजी ने उसे समझाया - "यह सब मैं समझता हूँ। लेकिन यह क़ानून का उल्लंघन है। इसलिए नहीं देख सकता। तुम ले जाओ और इसे जला दो। नहीं तो मुझे रिपोर्ट करना होगा।"

अदन उलझन में पड़ गया। वहाँ से अख़बार लेकर चला गया। गांधीजी के एक साथी के पास जाकर उसने कहा - "महाराज कहते हैं, कानून के ख़िलाफ़ है। किसका कानून? सरकार तो बदमाश है। सरकार के कानून का पालन क्यों करना? परंतु गांधीजी तो मज़हबी आदमी हैं। हमारी बात नहीं सुनते। आप समझाइए।"

साथी ने उससे कहा - "गांधीजी ऐसी बात नहीं सुनते हैं और नाराज़ होंगे वह अलग।"

फिर भी अदन का मन नहीं बदला। वह फिर धीमे-धीमे कदमों के साथ गांधीजी के पास गया और कहने लगा - "आप तो बड़े आदमी हैं। मज़हबी आदमी हैं। आप अपने लिए तो अख़बार नहीं देखेंगे। हमको यहाँ बहुत वर्ष हो गए हैं। अंदर के पृष्ठों पर हमारे मुल्क का कुछ समाचार हो तो हमें सुनाइये न।"

अदन की बात सुनकर गांधीजी को हँसी आ गई। अख़बार पढ़वाने की उसकी इस युक्ति को वे समझ गए। परंतु उसका निवेदन देखकर उसे नाराज़ न कर सके। उन्होंने अख़बार पर नज़र डाली और अंदर के पृष्ठों से सोमाली द्वीप के आंदोलन से जुड़े कुछ समाचार उसे पढ़कर सुनाए। अदन बाहर आकर बच्चों की तरह हँस-हँसकर कहने लगा - "देखो, गांधीजी ने अख़बार देखा। हमने उनको कैसे मनाया।"

किसकी प्रशंसा करें... प्रेम के वश होकर थोड़ा-सा बदलनेवाले संत की या प्रेम के वश होकर नियम का आग्रह न रखते हुए प्यार से झुकनेवाले की।

(३९)

गांधीजी का आचरण सुविचार के समान है। जीवन के अंतिम वर्षों में बंगाल में किसी व्यक्ति ने उनसे कुछ संदेश माँगा तो उन्होंने बांग्ला में -'आमार जीबोन आमार बानी' - 'मेरा जीवन ही मेरा संदेश है' कहा था।

अफ्रीका से भारत लौटने के बाद गांधीजी जब पहली बार जेल गए तो किसानों के समान भोर में चार बजे ही उठ जाते थे। सारा दिन काम करते। आम जनता मेहनत करके पसीने की रोटी खाती है। गांधीजी उन्हीं के समान चार घंटा चरखा कातते। दो घंटे रूई धुनते। इस तरह प्रतिदिन छह घंटे परिश्रम करते।

जेल में गांधीजी के साथ श्री शंकरलाल बैंकर को रखा गया था। गांधीजी ने उनके लिए दैनिक कार्यों की समय-सूची तैयार की थी। वे भी प्रतिदिन दो घंटे चरखा कातते थे।

शंकरलाल भाई जल्द ही जेल से रिहा होनेवाले थे। जेल में बापूजी के साथ रहते हुए उन्हें नया जीवन मिल गया था। जेल से रिहा होते समय शंकरलाल जी भाव-विभोर होकर उसी पर बोल रहे थे। यह सुनकर बापू ने कहा - "जेल में मेरे साथ रहते हुए यदि तुम्हें कोई फ़ायदा हुआ है तो जेल से बाहर जाने पर यहाँ के जीवन के बारे में लोगों को ज़रूर बताना।"

"मैं यहाँ के जीवन के बारे में लोगों को बताऊँगा। उससे सभी को लाभ ही होगा। मैं भी ऐसा ही मानता हूँ।"

गांधीजी ने पूछा- "यह सुनकर लोग क्या कहेंगे जानते हो?"

"मैंने इस पर विचार ही नहीं किया।"

बापू मनुष्य के स्वभाव से भली-भाँति परिचित थे। मनुष्य महात्माओं का अनुसरण करने के बजाय उन्हें सम्मान देकर किनारे लगा देता है। बापू ने कहा - "यदि मैं ऐसा कहता हूँ तो लोग कहेंगे कि वे महात्मा हैं। वे ही जीवन में वैसा कर सकते हैं। हमसे वैसा नहीं हो सकता है।"

बापू की ये सब बातें शंकरलाल भाई समझ गए - "सच है। लोग ऐसा ही समझेंगे और ऐसा ही कहेंगे।"

बापू - "तो आप इस बारे में लोगों से क्या कहेंगे?"

शंकरलाल भाई - "मैंने तो इस बारे में कुछ भी विचार नहीं किया है। फिर मैं क्या कहूँ?"

बापू - कोई ऐसा कहे तो उन्हें कहना कि मैं महात्मा बनकर पैदा नहीं हुआ था। मुझमें भी कई अवगुण थे मैं और मैं अपने अवगुणों को दूर करने के लिए मैं सतत प्रयत्नशील हूँ। जैसे बनिया आधी-आधी इकट्ठा करके साहूकार बनता है, वैसे ही मैंने भी धीरे-धीरे

सद्‌गुणों को विकसित किया और आज लोग मुझे महात्मा कहते हैं। जबकि मैं आज भी उससे बहुत दूर हूँ। वह सभी के लिए राजमार्ग है और हर व्यक्ति दृढ़तापूर्वक श्रद्धा के साथ उस दिशा में प्रयत्न करे तो ज़रूर आगे बढ़ सकता है।"

(४०)

वॉर्डर अदन एक हाथ से अपंग था। बापू के साथ सूत कातने और धुनने का काम बड़ी मेहनत और लगन से करता था। पुनिया भरने में वह निपुण था और पुनिया बड़े उत्साह के साथ भरता था।

सूत कातने का काम कुछ महीने चला। गांधीजी की आँखों में दर्द होने लगा। डॉक्टर ने आँखों को आराम देने के लिए कहा, परंतु गांधीजी नहीं माने!

अदन दुखी हुआ। गांधीजी को समझाने लगा - "आपको यह काम छोड़ देना चाहिए।"

गांधीजी ने अदन की बात सुनकर कहा - "देखो अदन, सूर्य अपना काम कभी नहीं छोड़ता। ठीक वक्त पर निकलता है। सारी दुनिया को रोशनी देता है। तो हम अपना काम कैसे छोड़ें?"

इस पर अदन क्या कहता? वह चुप रहा। गांधीजी के स्वास्थ्य की उसे हमेशा चिंता रहती थी। थोड़े दिनों बाद उनकी तबीयत कुछ ज़्यादा बिगड़ गई। उन्होंने भोजन कम कर दिया। पहले रोटी के चार टुकड़े रोज़ाना लेते थे, अब अदन से दो ही टुकड़े देने के लिए कहा।

अदन गांधीजी को देखता ही रहा। फिर धीरे-से बोला - "महाराज, सूर्य तो अपने नियम को छोड़ता नहीं है, तो आप रोटी क्यों कम कर रहे हैं?"

अदन की बातें सुनकर गांधीजी हँस पड़े।

गांधीजी ने लिखा है - "उसका प्यार मेरे सबसे अमूल्य संस्मरणों में रहेगा।"

(४१)

गांधीजी दक्षिण अफ्रीका से भारत लौट आए थे। एक बार वे अपने साथियों के साथ ट्रेन के तीसरे दर्जे में सफ़र कर रहे थे। तीसरे दर्जे का पाख़ाना गंदा था। उसे साफ़ करने की बात गांधीजी ने की। परंतु पानी की टँकी खाली थी। सिर्फ़ एक लोटा पानी था।

गांधीजी ने एक अख़बार लिया और कहा - "चलो, इस अख़बार की मदद से और एक लोटे पानी से पूरा पाख़ाना कैसे साफ़ किया जा सकता है दिखाऊँ।"

बापू ने पाख़ाने की गंदगी साफ़ की। इस तरह स्वच्छता का एक महत्त्वपूर्ण पाठ साथियों को सिखाया।

(४२)

यरवदा जेल में गांधीजी के कपड़े उनके साथी शंकरलाल भाई साफ़ करते थे। एक दिन गांधीजी ने उनसे विनम्र स्वर में कहा - "आप कपड़े न धोया करें, मैं धो लूँगा।"

शंकरलाल भाई ने पूछा - "क्या कपड़े धोने में कोई कमी रह जाती है?"

गांधीजी ने संतुष्टि व्यक्त करते हुए कहा - "कपड़े बराबर धोए जाते हैं। मुझे लगता है कि साबुन का कुछ ज़्यादा ही उपयोग होता है। उतने ही साबुन को मैं दुगुने दिन तक चला सकता हूँ।"

शंकरलाल भाई ने कहा - "अब मैं किफ़ायत से इस्तेमाल करूँगा।" पहले शंकरलाल भाई के मन में यह था कि साबुन भले ही ज़्यादा खर्च हो, पर कपड़े बराबर साफ़ होने चाहिए। अब किफ़ायत की दृष्टि प्राप्त हुई।

एक दिन गांधीजी ने कहा - "शंकरलाल, आज अंगीठी मत जलाना। आज पानी गरम नहीं करना है।"

शंकरलाल भाई ने पूछा - "क्यों?"

गांधीजी ने कहा - "रात को कमरे में लालटेन जलती है। मैंने सोचा कि टमलर में पानी भरकर उसके ऊपर रख दें। पानी सुबह तक गरम हो जाएगा। यह प्रयोग सफल हुआ। पानी पीने लायक गरम हो गया।"

शंकरलाल भाई को थोड़ा बुरा लगा। उन्होंने कहा कि, "सुबह अंगीठी जलाने में मुझे परिश्रम करना पड़ता होगा, ऐसा सोचकर तो आप यह नहीं कह रहे हैं? अथवा मेरे कामों से आप संतुष्ट नहीं है, ऐसा मुझे लग रहा है।"

गांधीजी ने कहा - "तुम तो अच्छी तरह पानी गरम करते हो। एक प्रयोग यह भी कर के देखा कि जलते हुए लालटेन पर पानी गरम किया जाय तो कैसा रहेगा। उतना कोयला बचेगा। इसमें बुरा लगने जैसा कुछ भी नहीं है।"

(४३)

एक बार यरवदा जेल में गांधीजी ने शंकरलाल भाई से पूछा - "आपने 'गीता' पढ़ी है?" "विद्यार्थी जीवन में पढ़ी थी। उसकी सही जानकारी नहीं है।" शंकरलाल भाई ने कहा।

गांधीजी ने दूसरा प्रश्न पूछा - "संस्कृत में पढ़ी है?" जवाब मिला - "नहीं। फ्रेंच भाषा में। संस्कृत नहीं आती थी।"

गांधीजी ने कहा-"'गीता' को संस्कृत में ही पढ़ना चाहिए। 'गीता' पढ़ने लायक संस्कृत तो आप सहज ही सीख सकते हो।"

"अब इस उम्र में संस्कृत सीखना मुश्किल है।"

गांधीजी ने चुनौती स्वीकार कर ली। वे अपने आप को शिक्षक मानते थे। अफ्रीका में अंग्रेज़ी सीखे ड्राइवर को अधिक तनख्वाह मिलती थी। गांधीजी थोड़े मील चलकर उसे पढ़ाने जाते।

जेल में भंडारकर की 'संस्कृत मार्गोपदेशिका' आई। पढ़ने की पद्धति और कार्यक्रम निश्चित हुआ। प्रतिदिन एक घंटा देकर किताब पूरी करवाई। "'गीता' पढ़ने के लिए इतना समय पर्याप्त है।"

'गीता' का अभ्यास शुरू हुआ। बापू पढ़ते समय ह्रस्व-दीर्घ उच्चारण पर पूरा ध्यान देते थे। थोड़े ही दिनों में 'गीता' समाप्त हुई। बापू ने कहा - "अब रोज़ एक अध्याय का पाठ करना।"

शंकरलाल भाई नए ज़माने के व्यक्ति थे। उन्होंने कहा - "वह किसलिए? आपके साथ 'संपूर्ण गीता' पढ़कर समझ ली है। अब रोज़ एक अध्याय क्यों?"

बापू - "यह एक ऐसी किताब है, जिसे प्रतिदिन पढ़ा जा सकता है। उसमें आपको प्रतिदिन एक नया सत्य मिलेगा।"

शंकरलाल भाई कुछ चिंतित लगे। बापू ने पूछा - "तुम्हारे मित्र कितने हैं?"

"बहुत सारे मित्र हैं।"

"संकट के समय कितने मित्र आपकी मदद कर सकते हैं?"

शंकरलाल भाई सोच में पड़ गए। निखालिस उत्तर दिया -

"ऐसा तो कोई नहीं है। शायद कोई मदद करे या न भी करे। आज के ज़माने के मित्रों के बारे में कुछ भी नहीं कहा जा सकता है।"

गांधीजी ने अपनी बात शंकरलाल भाई के निखालिस उत्तर के साथ जोड़ दी। किताबों का भी ऐसा ही है। बहुत सारी किताबें पढ़ी हों, परंतु संकट के समय वे सभी काम नहीं आती हैं। संकट के समय काम आए वही सच्ची किताब। 'गीता' एक ऐसी ही किताब है।

(४४)

यरवदा जेल में एक दिन सुबह गांधीजी ने अपने साथी से कहा - "मैं आज रात देर तक सो नहीं पाया।"

"क्यों?"

"मैं सोने गया। थोड़ी देर बाद पीछे की जाली में कुछ आवाज़ होने लगी। देखने पर सांप जैसा कुछ दिखा।"

"वॉर्डर (कैदी चौकीदार) बाहर सोता है उसे बुला लिया होता।"

"यदि मैं उसे बुलाता तो वह दूसरों को बुलाता और सब मिलकर सांप को मार डालते। मैंने सोचा कि यदि काटनेवाला है तो भले ही अंदर आकर मुझे काटे। वॉर्डर को हरगिज़ नहीं बुलाऊँगा। फिर यह विचार आया कि अंदर आकर यदि मुझे काटे तो जो होना होगा वह तो होगा ही। यदि बाहर जाए और ज़हरीला हो तो वॉर्डर को भी काटे। उसकी मौत हो जाएगी। अत: मेरे मन में यह प्रश्न उठा कि इस परिस्थिति में मेरा धर्म क्या है? यदि नहीं बताता तो वॉर्डर की जान को खतरा हो सकता है। यदि बताता हूँ तो वॉर्डर साप को मारे

बिना रहनेवाला नहीं है।"

"फिर क्या हुआ?"

"मैं इसी दुविधा में पड़ा हुआ था; ऐसे में चंद्रमा ऊपर आ गया था। जाली पर चंद्रमा की रोशनी पड़ी तो देखने पर पता चला कि यह साप नहीं, बल्कि गिरगिट था। उसके बाद मैं सो गया।"

साथी ने कहा कि, "सांप जैसे ज़हरीले प्राणी को मार डालने में हर्ज़ क्या है?"

तब गांधीजी ने उन्हें वह बात बताई जो उन्हें श्रीमद् राजचंद्र भाई ने वर्षों पहले बताई थी। राजचंद्र भाई ने कहा था कि हमें जैसे अपनी जान प्यारी होती है उसी तरह उन जानवरों को भी प्यारी होती है। अहिंसा का मतलब है कि हमारा चाहे जो हो, हमें दूसरों की जान नहीं लेनी चाहिए।

(४५)

जर्मनी के केलेनबेक गांधीजी की जीवनचर्या से प्रभावित होकर उनके साथी बने। दूसरी बार गांधीजी जेल से छूटनेवाले थे। केलेनबेक एक नई मोटरगाड़ी ख़रीदकर उन्हें लेने के लिए जेल के दरवाज़े पर खड़े थे।

गांधीजी जेल से बाहर आए। सभी से मिले। केलेनबेक ने गांधीजी से मोटरगाड़ी में बैठने की विनती की।

गांधीजी ने पूछा - "यह किसकी मोटर है?"

केलेनबेक - "मेरी है। ख़रीदकर सीधे यहीं आया हूँ।"

"किसलिए ख़रीदी?"

केलनबेक का उत्साह कुछ कम हुआ। संकुचित मन से बोले -

"आपको ले जाने के लिए।"

गांधीजी ने तुरंत माँग रखी - "यह मोटरगाड़ी तुम अभी नीलामी के स्थान पर रखकर आओ। मेरे लिए इतना मोह क्यों? मैं मोटरगाड़ी में बैठनेवाला नहीं हूँ। तुम गाड़ी रखकर वापस आओ तब तक मैं यही खड़ा रहूँगा।"

केलेनबेक मोटरगाड़ी को नीलामी के स्थान पर रख आए। उनके वापस लौटने तक गांधीजी और उनके सभी साथी जेल के दरवाज़े पर ही खड़े रहे। केलेनबेक के वापस लौटने पर गांधीजी उनके साथ पैदल चलकर मंज़िल तक पहुँचे।

(४६)

खादीकार्य हेतु पैसा इकट्ठा करने के लिए गांधीजी उड़ीसा में यात्रा कर रहे थे। एक सभा में गांधीजी बैठे थे। एक अत्यंत वृद्ध स्त्री आई। उसके बाल रूई जैसे सफेद थे। कमर झुकी हुई थी। वह स्वयंसेवकों से लड़-झगड़कर गांधीजी के पास पहुँची।

आपके दर्शन हुए - कहकर गांधीजी के पैरों पर गिर पड़ी। अपनी ओटी में से एक अधेला निकाला और गांधीजी के पैरों के पास रख दिया और चुपचाप वहाँ से चली गई।

गांधीजी ने वृद्धा का दिया हुआ अधेला उठा लिया और अपनी ओटी में खोंस लिया। हिसाब-किताब रखनेवाले सेठ जमनालाल बजाज पास में ही बैठे थे। कहा - "मुझे वो अधेला दे दीजिए।"

गांधीजी ने कहा - "वह तुम्हें नहीं दिया जा सकता।"

जमनालालजी - "क्या वह अधेला चरखा संघ के हजारों रुपयों से ज़्यादा कीमती है?

गांधीजी - "किसी के पास लाखों हों उसमें से वह हज़ार दे दे तो वह बड़ी बात नहीं है। परंतु गरीब, फटेहाल वृद्धा ने यह अधेला दिया, उसकी आत्मा कितनी महान होगी और उसका यह अधेला तो करोड़ों से ज़्यादा कीमती है।"

(४७)

दक्षिण अफ़्रीका में फ़ीनिक्स आश्रम से लगभग ग्यारह मील दूर वेरूलम था। वहाँ एक भारतीय धनवान के दान से लक्ष्मीनारायण मंदिर का निर्माण किया गया। गांधीजी को उसके उद्‌घाटन के लिए आमंत्रित किया गया था। प्रेम के वशीभूत उन्होंने 'हाँ' कह दी थी। सभी आश्रमवासियों से भी आने का आग्रह किया। रेल का किराया देने के लिए भी वे तैयार थे।

गांधीजी की रीति तो सबसे न्यारी थी। उन्होंने हँसते हुए कहा - "ठीक है। रेल का किराया दे देना, परंतु मैं आपको बता देता हूँ कि हम रेल का किराया लेकर भी पैदल ही चलकर आएँगे। रेल किराये के रुपए आश्रम में जमा होंगे।"

स्टेशन पर स्वागत की तैयारी की गई थी। गांधीजी अगले स्टेशन से अकेले ही रेलगाड़ी में वेरूलम तक जाएँगे ऐसी व्यवस्था की गई थी।

मंदिर का भव्य उद्‌घाटन हुआ। लोगों के आनंद-उत्साह की सीमा न थी। मंदिर लक्ष्मीनारायण जी का था। लक्ष्मीजी ने गांधीजी के लिए प्रश्न खड़ा कर दिया। उद्‌घाटन में गांधीजी को उपहारस्वरूप चांदी का ताला-चाभी दिया गया। साथ ही सोने के तारों से मढ़ी हुई 'गीता' भी उन्हें भेंट की गई।

गांधीजी इकट्ठा हुए जन समुदाय के सामने निःसंकोच बोले - "यह चांदी का ताला-चाभी और सोने से मढ़ी 'गीता' आपने उपहार के रूप में मुझे देकर मेरी चिंता और भी बढ़ा दी। मैं यह सब कहाँ रखूँगा? यह तो हीरे को चीथड़ों में लपेटने जैसा है। 'गीता' तो स्वयं एक जगमगाता रत्न है। सोने जैसी जड़ वस्तु उसकी शोभा क्या बढ़ाएगी? मैं इस 'गीता' को अपने पास नहीं रख सकता। क्योंकि कोई इसे न ले जाय इसकी चिंता मुझे हमेशा करनी होगी। 'गीता' तो अनासक्ति सिखाती है। आप लोगों ने सोने से मढ़ी 'गीता' देकर मुझे आसक्ति में डाल दिया। परंतु मैं होशियार हो गया हूँ। उसका इंतज़ाम कर लूंगा।"

गांधीजी ने चांदी और सोने की कीमत से मिला धन फ़ीनिक्स आश्रम के नाम जमा करवाया।

(४८)

सन् १९२२ में गांधीजी को यरवदा जेल में रखा गया था। जेल के सुपरिटेंडेंट मेजर जोन्स को लगा कि गांधीजी के कमरे का फ़र्श थोड़ा नीचे होने के कारण गीला रहता है। यूरोपीय कैदियों को रखे जानेवाले कमरे में गांधीजी को रखा जाए। ऐसे कमरे का फ़र्श ऊँचा था। बरामदा था। सामने फूल लगे थे। मेजर जोन्स ने प्रस्ताव रखा। गांधीजी ने स्वीकार किया। उनकी जगह बदल दी गई।

शाम के समय गांधीजी ने अपने साथी शंकरलाल से कहा - "हमें अपनी कोठरी में वापस जाना चाहिए। हमने यहाँ आकर अच्छा नहीं किया। सुपरिटेंडेंट के पास कैदियों की जगह के फेर-बदल का अधिकार है। किंतु मेरे लिए नहीं है। मेरे लिए तो जगह सरकार ने

निश्चित की होगी। उसे बदला नहीं जा सकता है। सुपरिटेंडेंट से ज़रूर गलती हुई है। सरकार को इसका पता चला तो उन पर मुसीबत आएगी। मेरा धर्म है उन्हें बचाना।"

यह बात सुपरिटेंडेंट के सामने रखी गई। पहले उनकी समझ में नहीं आया। वे बोले, "मैं सुपरिटेंडेंट हूँ। मेरे पास अधिकार है। सरकार को मेरा काम पसंद नहीं आएगा और वे मेरे काम में दखल देंगे तो मैं इस्तीफ़ा दे दूँगा।"

गांधीजी - "तुम कहते हो ऐसा अधिकार तुम्हारे पास है, किंतु सामान्य कैदियों के लिए। यदि मेरे लिए हो तो भी हमें वापस पुरानी जगह रख दीजिए।"

दोनों ही अपनी बात पर अड़े रहे। अंत में गांधीजी ने कहा - "मैं तुम्हारी भावना समझता हूँ । उसकी क़द्र भी करता हूँ।

परंतु सरकार की क्या इच्छा है, उसे जान लें तो अच्छा होगा। फ़िलहाल हमें वापस पुरानी जगह ले चलो। गृहमंत्री से बात करो। यदि हमारी चिंता बेवजह है, पता चले तो हमें वापस यहाँ ले आना।"

गांधीजी के इस प्रस्ताव से मेजर सहमत हुए। उन्हें पुराने कमरे में वापस भेजा गया। तीन-चार दिन बाद मेजर जोन्स आए। गांधीजी की दीर्घदृष्टि और चिंता के लिए आभार प्रदर्शित करने लगे - "आपकी बात सच निकली। यहाँ आपको रखना सरकार की ओर से निश्चित हुआ था। सरकार की मंज़ूरी के बिना यदि आपको दूसरी जगह रखा जाता तो मैं अच्छी-खासी मुश्किल में पड़ जाता। मैं भी एक प्रकार का हठी आदमी हूँ। सरकार मेरे निर्णय को न मानती तो मुझे इस्तीफ़ा ही देना पड़ता। आपकी सही सलाह के लिए मैं आपका बहुत-बहुत आभारी हूँ।"

(४९)

ख़ान अब्दुल गफ़्फ़ार ख़ान जब १९३४ में जेल से छूटे, तो बापू ने उन्हें आराम करने के लिए अपने पास वर्धा बुला लिया था। वे वर्धा आकर जमनालाल बजाज के यहाँ ठहरे। साथ में उनके बच्चे भी थे। प्रार्थना के वक्त सब बापू के पास आते।

बापू का जन्मदिन था। बापू ने सभी को खाने के लिए रोका। भोजन के बाद ख़ान साहब के बेटे गनी ने बापू से कहा - "आज यहाँ आकर मुझे बहुत आनंद हुआ। मुझे लगा कि आज बापू का जन्मदिन है, खाने को अच्छा पुलाव, मुर्गी इत्यादि मिलेंगे। पर आज भी वही रोज़ का कद्दू निकला। वह भी सिर्फ़ उबला हुआ।"

यह सुनकर बापूजी खिल-खिलाकर हँस पड़े। ख़ाँ साहब को एक तरफ ले जाकर बोले - "ये तो बच्चे हैं। हमें उन्हें उनकी पसंद का खाना खिलाना चाहिए। हम उनके लिए माँस, अंडे, जो भी चाहिए बनवा देंगे।"

ख़ाँ साहब ने बापू से कहा -"बापू, वे तो मज़ाक कर रहे हैं। हम जहाँ कहीं जाते हैं, वहाँ यजमान जो कुछ भी खाते हैं, हम भी वही खाते हैं। आप कुछ और देंगे तो भी वे उसे छुएँगे नहीं।"

ख़ाँ साहब ने दूसरा खाना खाने से इनकार कर दिया। उन्हीं के समान उनके बच्चों ने भी दूसरा खाना नहीं खाया।

बँटवारे के बाद देश में दंगे फैल गए थे। गांधीजी ख़ान अब्दुल गफ़्फ़ार ख़ान के साथ बिहार के गाँवों की यात्रा पर थे। कुछ बेसहारा मुस्लिम बापू के पास आए और कहा - "बापू, हम क्या करें? यहाँ चारों ओर हिंसा, मार-काट और अनिश्चितता का माहौल है।"

बापू ने कहा - "मैं सिर्फ़ बहादुरी का पाठ सिखा सकता हूँ। तुम्हें अपने घर वापस जाना चाहिए।"

उन्होंने चौंककर पूछा - "यह कैसे होगा? हमारा कत्ल नहीं होगा इसका क्या भरोसा?"

बापू ने कहा - "मैं क्या भरोसा दे सकता हूँ? यदि तुम लोगों में से किसी की भी हत्या हुई, तो हिंदुओं को उसकी कीमत गांधी के जीवन से चुकानी होगी। सिर्फ़ इतना ही भरोसा मैं तुम्हें दे सकता हूँ।"

यह सुनकर सबमें हिम्मत आई। सभी अपने-अपने घर चले गए।

शाम की प्रार्थना सभा में बापू ने कहा - "यहाँ के मुस्लिम भाइयों को मैंने भरोसा दिया है कि उनमें से यदि किसी की भी हत्या हुई तो बिहार के हिंदुओं को उसकी कीमत गांधी के जीवन से चुकानी पड़ेगी।"

गांधीजी के मुंह से सुननेवालों के लिए ये शब्द मात्र नहीं थे। वह गांधीजी की सहृदयता, करुणा थी। वह सभी सुननेवालों को अपने प्रवाह में बहाकर उनके हृदय से बैर-द्वेष जैसी प्रवृत्तियों का शमन कर रही थी।

अफ्रीका से लौटने के बाद गांधीजी अहमदाबाद के अपने मित्र बैरिस्टर जीवनलाल के घर ठहरे थे। अहमदाबाद में ही एक आश्रम शुरू करने का विचार बार-बार उनके मन में आ रहा था। देशसेवा की लड़ाई का स्वरूप अब तक मन में स्पष्ट नहीं हुआ था।

एक शाम जीवनलाल घर लौटे और हँसते हुए बोले - "गांधी, आप तो चारों ओर मशहूर होने लगे हैं।"

फिर उन्होंने सारी बात बताई - "आज मेरे एक वकील मित्र से मुलाकात हुई। हम एलिस पुल पर चल रहे थे। आगे दो लोग बातें करते जा रहे थे। उसमें एक अपना बावर्ची था। वह अपने साथी से कह रहा था, हमारे यहाँ अफ्रीका से कोई आया है। नाश्ते में दस-बारह केले चाहिए। पूरा दिन बैठे रहता है। कहता है कि बैरिस्टर है। पर कुछ भी काम नहीं करता। देखा गांधी, हमने तो आपकी इज़्ज़त को चार चांद लगा दिए।"

और बैरिस्टर मित्र हँसने लगे। गांधीजी भी उस हँसी में शामिल हो गए।

लेकिन फिर गंभीर होकर कहने लगे - "वो एक तरह से सच ही कह रहा है। मैं तो कुछ काम नहीं करता हूँ। लेकिन इन दिनों हर पल मैं क्या कर रहा हूँ, बताऊँ? जैसे कोई सेनापति दुश्मन के किले के सामने खड़ा हरदम यह सोचता रहता है कि कौन-सा पत्थर तोड़ूं, किस कंकड़ को हटाऊँ, कैसे किले में रास्ता बनाऊँ, कैसे पूरा लश्कर किले में दाखिल करा दूँ - वैसे मैं भी हरदम एक ही बात सोचता रहता हूँ कि ब्रिटिश सल्तनत के इस किले को कैसे भेदूँ।"

और थोड़े ही दिनों में गांधीजी ने एलिस पुल के पास जीवनलाल बैरिस्टर द्वारा दिए हुए मकान में आश्रम की स्थापना कर दी।

(५२)

कर्मवीर गांधीजी अफ्रीका से भारत लौट आए थे। अहमदाबाद के कोचरब में उन्होंने आश्रम शुरू किया। देशसेवा का कार्य करने लगे।

शहर के एक वकील देशसेवा का काम करने के लिए बापू के पास आश्रम में आए। बापू उस समय रसोई में अनाज साफ़ कर रहे थे। मेहमान वकील का स्वागत करते हुए बापू ने बैठने के लिए चटाई का आसन ज़मीन पर बिछाया और कहा - "बैठो।"

कोट-पतलून में सजे-धजे वकील खड़े-खड़े ही बोले - "मैं बैठने नहीं आया। मुझे काम चाहिए। मेरे लायक कुछ काम आप मुझे देंगे इस उम्मीद में मैं आश्रम में आया हूँ।"

बापूजी ने कहा - "बड़ी खुशी की बात है।" उनके सामने अनाज की ढेरी रखी और कहा - "एक भी कंकड़ न रहे ऐसे साफ़ करना।"

वकील आश्चर्यचकित रह गए। उनका मानना था अनाज साफ करना स्त्रियों एवं नौकरों का काम है। दुखी मन से बोले- "अनाज साफ़ करने का काम मुझे करना होगा?"

बापूजी ने कहा - "फ़िलहाल मेरे पास यही काम है।"

वकील भी बुद्धिमान था। वह समझ गया कि ये कोई साधारण नेता नहीं हैं। ये छोटे व बड़े कार्यों में भेद नहीं समझते हैं। छोटे-बड़े सभी भारतवासी हर काम करने के लिए तत्पर और तैयार रहें यही वे चाहते हैं।

गांधीजी के सान्निध्य में वे वकील अनाज साफ़ करते गए। साथ ही अपने जीवन से जड़-रूढ़ विचारों को साफ़ करने की भी प्रेरणा पाते गए।

(५३)

साबरमती आश्रम में महासभा की कार्यकारिणी की महत्त्वपूर्ण बैठक चल रही थी। एक आश्रमवासी दौड़ता हुआ आया और चिल्लाने लगा - "ओ मर गया रे! पेट में कुछ हो रहा है।"

बापू अचानक खड़े हुए और कार्यकारिणी की बैठक छोड़कर उसके पास आए। पास ही एक स्थान पर सुलाया। उसकी पीड़ा समझने का प्रयत्न किया और उपचार शुरू कर दिया।

थोड़ी देर बाद कार्यकारिणी की बैठक में वापस गए। तब किसी ने मज़ाक किया - "ऐसे पागल आदमी को बापू ऐसे समय में इतना प्यार करते हैं!"

बापू ने धीरे-से कहा - "पागल के अलावा मेरे पास दूसरा कौन आता है? मेरे पास आया अतः मेरे घर का हुआ। यहाँ घर के आदमी का मुझ पर सबसे पहला अधिकार है।"

(५४)

गांधीजी समय के बड़े पाबंद थे। गोधरा की राजकीय परिषद में तिलकजी को आने में आधे घंटे की देरी हुई। गांधीजी ने कहा - "स्वराज आधा घंटा देर से आएगा।"

समय की पाबंदी के बारे में उनके अपने नियम थे। चंपारण में उनके विरुद्ध मुकदमा चलने वाला था। ग्यारह बजे का समय

निश्चित हुआ। जेल जाने के लिए तांगे की व्यवस्था करनी थी। गांधीजी ने साढ़े दस बजे तांगा लाने के लिए कहा। साथियों ने कहा - "तांगे के लिए आधे घंटे का रास्ता नहीं है। इतनी जल्दी क्यों मँगवाए?"

गांधीजी ने कहा - "साढ़े दस बजे तांगा नहीं आया तो, पैदल चलकर मैं अदालत तक पहुँच सकूँ इतना समय मेरे पास होना चाहिए।"

कोई अनहोनी या अपने लोगों द्वारा समय के प्रति लापरवाही, बापूजी के समय की पाबंदी के बीच न आ सके, इसलिए वे हमेशा चौकन्ने रहते थे।

(५५)

अहमदाबाद के प्रेमाभाई सभागृह में गांधीजी की अध्यक्षता में गुजराती साहित्य का अधिवेशन चल रहा था। गांधीजी का भाषण शुरू हुआ। सभा में से 'माईक! माईक!' आवाज़ आई।

गांधीजी ने कहा - "शांत होकर सुनो, सुनाई देगा। अब सुनाई दे रहा है न?"

सामने की दीवार का सहारा लेकर खड़े एक कार्यकर्ता ने कहा - "ना जी, सुनाई नहीं दे रहा है।"

गांधीजी ने कहा- "तो यह कैसे सुनाई दिया।" पूरी सभा खिल-खिलाकर हँस पड़ी।

हास्य की लहर थमी। पीछे प्रसन्न शांति छोड़ गई।

(५६)

आज़ादी के पहले गांधीजी पश्चिमोत्तर प्रांत में गए थे। वहाँ सीमांत गांधी के नाम से प्रसिद्ध ख़ुदाई ख़िदमतगारों के प्यारे नेता, ख़ान अब्दुल गफ़्फ़ार ख़ान के मेहमान बने।

गांधीजी के शयनकक्ष के पास हथियारबंद पहरेदार खड़े थे। यह सिर्फ़ रक्षात्मक कदम था। गांधीजी का ध्यान उस ओर गया। उन्होंने ख़ान साहब से पूछा - "यह क्या है?"

"यहाँ कोई घुस आए तो उसे भगाने के लिए है।"

ऐसे जवाब से गांधीजी को संतोष न हुआ।

"मुझे यह पहरेदार नहीं चाहिए।" धीरे-से पर दृढ़ता के साथ उन्होंने कहा। वाद-विवाद के लिए अवकाश नहीं था। पहरेदारों से हथियार ले लिये गए और उसके बाद ही गांधीजी सोए।

यह बात वीर पठानों के उस प्रदेश में हवा की तरह फैल गई - "देखो तो! अजीब है यह आदमी।"

ख़ुदा पर उसे इतना भरोसा है कि उसे शस्त्रों की कोई ज़रूरत ही नहीं है।

(५७)

सन् १९४७ की गर्मियों में बिहार में साम्प्रदायिक दंगे हो रहे थे। बापू ने दंगों को शांत करने के लिए यात्राएँ कीं। यात्राएँ समाप्त करके वापस दिल्ली आए थे। उन दिनों उनकी ख़ुराक कम हो गई थी।

एक सुबह मनु बहन ने बापूजी को खाना खाने के समय आम के

रस से भरा प्याला दिया। बापू ने पूछा - "सबसे पहले मुझे यह बता कि इस आम की कीमत क्या है?"

मनु बहन ने समझा बापू विनोद कर रहे हैं।

बापू कागज़ की नकल के काम में जुट गए। थोड़ी देर बाद मनु बहन ने देखा आम का रस प्याले में वैसा ही था। इसलिए उन्होंने बापू से वह पीने के लिए कहा।

बापू - "मैं समझता था कि तुम आम की कीमत पूछकर आओगी। आम उपहार में आएँ हों, तो उनकी कीमत पूछने के बाद ही मुझे देना चाहिए। यह तो तुमने किया नहीं। मैंने तुमसे पूछा, फिर भी तुमने जवाब नहीं दिया। एक आम दस आने का है, ऐसा मैंने सुना है। इतना महंगा फल खाए बिना भी मैं जी सकता हूँ। इस तरह के फल खाने से मेरे शरीर में ख़ून बढ़ता नहीं, घटता है। ऐसी असह्य महंगाई में तुमने चार आमों का रस मुझे भरकर दिया है। यानी ढाई रुपए का प्याला हुआ। मैं इसे किस मुँह से पी सकता हूँ?"

इतने में बापूजी को प्रणाम करने एक-दो निराश्रित बहनें अपने बच्चों के साथ आईं। बापू ने तुरंत दो अलग-अलग कटोरों में दोनों बच्चों को आम का रस पीने के लिए दे दिया। उनके हृदय से मुक्ति का निःश्वास निकला। मनु बहन से कहने लगे - "ईश्वर ने मेरी मदद की, यही उसका उदाहरण है। ईश्वर ने इन बच्चों को भेज दिया। वे भी ऐसे बच्चे जिनकी मैं कामना करता हूँ। देखो, ईश्वर की यह कैसी लीला है!"

(५८)

बापूजी गोल मेज परिषद में भाग लेने के लिए लंदन गए हुए थे। इंग्लैंड के राजा जॉर्ज पंचम ने सभी सदस्यों के लिए शाम को भोजन का आयोजन किया था। भारत के वायसराय सर सैम्युअल होर गांधीजी को निमंत्रित करने को लेकर चिंतित थे। एक तो यह कि क्या राजा ऐसे बागी से मिलेंगे? दूसरा यदि मिलें भी तो गांधीजी की पोषाक समारोह के योग्य नहीं थी, उसका क्या करें? वायसराय ने राजा से बात की। राजा को पहले तो गुस्सा आया - "क्या? उस बागी फ़कीर को, अपने अधिकारियों पर आक्रमण करने वाले को, मैं अपने महल में बुलाऊँ?" इस तरह उन्होंने उस 'खुले घुटनेवाले और अयोग्य पोषाक वाले छोटे आदमी' के प्रति नापसंदगी जताई। पर अंत में निर्णय हुआ कि लिबास को लेकर कोई शर्त रखे बिना गांधीजी को निमंत्रण दिया जाय।

समारोह में उचित समय पर गांधीजी और राजा की मुलाकात का दायित्व वायसराय ने संभाला। खादी के उजले कपड़ों में गांधीजी को भीड़ में भी पहचानना मुश्किल न था। वायसराय ने गांधीजी को राजा से मिलवाया तथा उनका परिचय करवाया। कुछ क्षण बीते। गांधीजी की बगावत की बात भूलना राजा के लिए कठिन था। पिछले साल गांधीजी ने सम्पूर्ण भारत में प्रचंड सत्याग्रह आंदोलन चलाया था। पर एक बार दोनों बातें करने लगे तो फिर काफ़ी समय बातें चलती रहीं। राजा जॉर्ज पंचम सहृदय थे। परंतु बातचीत के दौरान राजा की नज़र गांधीजी के घुटनों पर क्षणभर के लिए रुकी और वायसराय की धड़कनें तेज़ हो गईं।

जॉर्ज पंचम अपने कर्तव्यों के प्रति सजग राजा थे। बिदाई के

समय उन्होंने गांधीजी को चेतावनी दी - "याद रखना, मेरे साम्राज्य पर किसी भी प्रकार का आक्रमण मैं बर्दाश्त नहीं करूंगा।"

वायसराय की सांसें रुक गईं। अब आगे क्या होगा?

गांधीजी ने सज्जनतापूर्वक मामला संभाल लिया। उन्होंने जवाब दिया - "आपकी मेहमाननवाज़ी के बाद आप जैसे भद्र पुरुष के साथ राजनीतिक विवाद में मुझे नहीं पड़ना चाहिए।"

मित्रतापूर्ण वातावरण में दोनों ने एक-दूसरे से विदाई ली।

वायसराय देखते रह गए। एक कितना प्रामाणिक राजा और दूसरा कितना महान राजनीतिज्ञ! वे सोचते रह गए कि दुनियादारी से अलग चलनेवालों के बीच कितना उत्कृष्ट व्यवहार होता है।

(५९)

सन् १९३१ में गांधीजी गोल मेज परिषद में भाग लेने के लिए लंदन गए हुए थे। ब्रिटिश अधिकारियों को मनाने का प्रयत्न असफल रहा। चर्चिल ने तो मिलने से ही इनकार कर दिया। उस समय 'ब्रिटिश साम्राज्य के सबसे समझदार पुरुष' माने जाने वाले जनरल स्मट्स का गांधीजी के प्रति सद्भाव सराहनीय था। गांधीजी को उन्होंने अपने यहाँ स्नेहपूर्वक आमंत्रित किया। जिस समय जनरल स्मट्स दक्षिण अफ्रीका के प्रशासक थे, उस समय गांधीजी ने उनके विरुद्ध आंदोलन किया था। उन्हें पराजित भी किया था। स्मट्स के माध्यम से ही भारतीयों के लिए न्याय प्राप्त किया था। बाद में गांधीजी के प्रखर विरोधी स्मट्स उनके परम प्रशंसक और मित्र बन गए।

लंदन के अपने निवास पर स्मट्स गांधीजी को एक अलमारी के

पास ले गए। उन्हें एक वस्तु दिखाकर पूछा - "यह क्या है? कुछ याद आ रहा है?"

गांधीजी उस वस्तु को देखते रहे। जूतों की एक जोड़ी थी। दक्षिण अफ्रीका की जेल में आख़िरी बार गांधीजी जनरल स्मट्स के कैदी थे। उस समय उन्होंने हाथों से जूतों की यह जोड़ी बनाई थी और उन्हें उपहार में दी थी।

गांधीजी को दक्षिण अफ्रीका में जेल हुई थी। उस समय जनरल स्मटस् बैरिस्टर थे। उनका व्यवहार अत्यंत विवेकपूर्ण था। परंतु उनकी सरकार का व्यवहार अच्छा नहीं था। प्रारंभ में गांधीजी को जेल की अत्यंत संकरी कोठरी में रखा गया था। ऊपर छत की जाली से कोठरी में थोड़ा-सा उजाला आता था। वहाँ बैठने के लिए कुर्सी नहीं थी। गांधीजी खड़े रहकर पढ़ते थे। मज़दूरी का काम भी वे नियमपूर्वक करते थे। जेल में एक जगह से दूसरी जगह ले जाते वक्त उन्हें हथकड़ी पहनाई जाती थी, उसे भी सह लेते थे। पाख़ाने अत्यंत गंदे थे। खाने की तकलीफ़ थी। गांधीजी अन्य भारतीय कैदी साथियों से ज़्यादा सुविधा लेना नहीं चाहते थे। लेकिन धीरे-धीरे उन्होंने जितना सम्भव हो सके उतने परिवर्तन करवाए थे। शुरू-शुरू में कैद उन्हें तकलीफ़देह लगी। पर उन्होंने उस और ध्यान नहीं दिया। जनरल स्मट्स इस तरह मुझे झुकाना चाहते हैं तो ऐसा नहीं होगा यह उन्होंने ठान लिया था।

सन् १९१४ तक वे कई बार जेल की यात्राएँ कर आए थे। जब वे अंतिम बार जेल में थे, तब उन्होंने अपने हाथों से एक जोड़ी जूते बनाए थे और जेल से छूटने के बाद अपने विरोधी जनरल स्मट्स को मिस सोन्या श्लेशिन के हाथों उपहार में पहुँचाए थे।

जनरल स्मट्स ने बाद में लिखा - “उस जोड़ी को मैंने कई गर्मियों में पहना है। मुझे हर वक्त ऐसा लगता था कि इतने महान पुरुष द्वारा बनाए गए जूते पैर में डालने का सामर्थ्य मुझमें नहीं है।”

(६०)

बिहार में एक माँ ने आंदोलन में अपना बेटा गंवाया। बापू उसके पास गए और उसके पैर छुए। हाथ जोड़कर कहने लगे - “माँ, यह तुम्हारा बेटा ही सामने खड़ा है। उसके सिर पर हाथ रखो और आशीर्वाद दो कि देश के लिए अपने प्राण दे सकूँ।”

सामने खड़े महात्मा के लिए माँ के दिल से प्रार्थना निकली - “बेटा, अमर रहो।”

बापू के दिल की इच्छा पूरी हुई। बापू की भी मानव कल्याण यज्ञ में आहुति दी गई।

माता की - भारतमाता की प्रार्थना उस सहृदय बलिदान पर हमेशा-हमेशा निकलेगी - “बेटा, अमर रहो।”